सत्साहित्य-प्रकाशन

नाश का विनाश

(पौराणिक नाटक)

लेखक

मामा वरेरकर

अनुवादक

रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मन्त्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

पहली बार १९६५
मूल्य
तीन रुपये

मुद्रक
युनाइटेड इंडिया प्रेस,
नई दिल्ली

प्रकाशकीय

मराठी के इस नाटक का हिन्दी रूपान्तर प्रकाशित करते हुए जहा हर्ष होता है, वहा गहरा विषाद भी । हर्ष इसलिए कि पाठको को एक उत्तम कृति सुलभ हो रही है, लेकिन विषाद इसलिए कि इस नाटक के प्रकाशन मे असामान्य विलम्ब हुआ और इस बीच इसके लेखक का स्वर्ग-वास हो गया। लेखक से जब कभी भेट होती थी, वह बराबर पूछते थे कि किताब कब छपकर आ जायगी, लेकिन हमारे जल्दी करने पर भी पुस्तक उनके जीवन-काल मे प्रकाशित नही हो सकी। लेखक की हिन्दी मे कई पुस्तके निकली है, लेकिन 'सस्ता साहित्य मडल' तथा हम सबके प्रति उनकी बडी आत्मीयता थी, इसलिए जब उनका हिन्दी उपन्यास 'सिपाही की बीवी' मण्डल मे निकला था और उसकी पहली प्रति हमने उन्हे भेट की थी तो उन्हे एक अनोखा ही आनन्द मिला था। इसलिए यह रचना अब प्रकाशित हो रही है तो लेखक का ध्यान विशेष रूप से आ रहा है।

मामा मराठी के सिद्धहस्त लेखक थे। उनके कई उपन्यास, नाटक तथा कहानी-सग्रह मराठी के निकले है। उनमे से कुछ का हिन्दी मे भी अनुवाद हुआ है। मामा चूकि स्वय एक कुशल अभिनेता भी रहे थे, इस-लिए उन्हे रगमच का विशेष अनुभव था। यही कारण है कि उनके नाटक जहा सुपाठ्य है, वहा मच पर भी खेले जा सकते है।

हम लेखक के प्रति अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए आशा करते है कि उनकी इस अत्यन्त रोचक, मनोरजक तथा शिक्षाप्रद रचना का सर्वत्र आदर होगा और जो भी इसे पढेगे उन्हे अपूर्व रस प्राप्त होगा।

—मत्री

प्रस्तावना

कौन कहेगा कि 'नाश का विनाश' करने की कल्पना जितनी प्राचीन है, उतनी ही अर्वाचीन नही ? उत्पत्ति का पता अभी तक किसी को नही लगा, परतु सहार अनादि काल से होता आ रहा है। यह नाटक जिस समय लिखा गया था, उस समय एटम वम का आविष्कार नही हुआ था। आगे एटम वम ने सहार किया और अब एटम बम के सहार की योजना आगे आ रही है। यह भी क्या एक प्रकार से नाश का विनाश ही नही ?

जगत के विनाश के लिए सहार के अत्यावश्यक होते हुए भी, उसका विनाश करके सर्वत्र शान्ति का साम्राज्य स्थापित करना चाहनेवाले वडे-वडे कार्यकर्ता और रण-धुरधर विद्वान भी अपने होश किस तरह खो बैठते हैं, यह जिस तरह आज दीखता है, उसी तरह आदिकाल मे भी था। इसका इतिहास दक्ष की कथा में आया है। इसी अवास्तविक कल्पना के कारण प्रजापति दक्ष अपना मानसिक सतुलन खो बैठा। उसी तरह आज के दक्ष कहलानेवाले कुछ प्रजापति भी कही अपना सतुलन तो नही खो बैठेगे, ऐसा लग रहा है। प्रलय की कल्पना प्राचीन है। उसी तरह उसे नाश करने की कल्पना भी केवल अर्वाचीन नही। यह नाटक जिस समय लिखा गया था, उस समय अवश्य इसका पता नही लगा था।

प्रजापति दक्ष की अधोगति की कथा अठारहो पुराणो मे भिन्न-भिन्न प्रकारो मे कही गई है। उन सबका सकलन करके प्रस्तुत नाटक की कथा-वस्तु निर्मित हुई है। प्राय सभी पौराणिक कथाओ के पार्श्व मे एक-न-एक रूपात्मक कल्पना होती है। उस कल्पना को ऐसा स्वरूप देकर, जो आधुनिक सस्कृति के अनुकूल हो, यह नाटक लिखा गया है।

क्या पुराण, क्या कुरान, क्या वाइविल, सभी मे आदिमानव (प्रिमिटिव-मैन) की कल्पना प्राय एक समान ही मिलती है। स्थान-भिन्नता के प्रभाव और सस्कार-सम्पन्नता के अभाव के कारण ही कुछ थोडा फर्क हो गया है। इस नाटक को लिखते समय कबीर के "वावा आदम महादेव हैं, हौवा अम्बा

माता है " वाक्य ने मुझे काफी आधार दिया । आदिमानव और आदि-पुरुष इन दोनो विदेशी और भारतीय कल्पनाओ को एकत्र करके इस नाटक का शकर चित्रित किया गया है । जिन पाठको ने भिन्न-भिन्न धर्म-ग्रथो का तुलनात्मक अध्ययन किया होगा, उन्हे यह भूमिका सहज ही ग्राह्य हो जायगी ।

प्रेम की उत्पत्ति, विकास और परिणति प्रथम बार इसी प्रसग से हुई । शिव-सती-सयोग की इस प्रेम-कथा को हम पहली प्रेम-कथा कह सकते है । सब पुराणो की प्रेम अथवा विवाह-कथाओ को देखने से यह दिखाई देगा कि इसके बाद की सारी प्रेम या विवाह-कथाए इस कथा की मान्यता से निर्मित हुई ।

आदिमानव के दो स्वरूप—बुद्धिप्रधान मानव और बुद्धिहीन मानव—इस नाटक मे शकर और उसके अनुचरो के रूप मे चित्रित किये गए हैं । स्त्री-पुरुष के भेद की कोई कल्पना न रखनेवाला पहले अक का आदिपुरुष शकर-सती (आदि-प्रकृति) के ससर्ग से बुद्धि के बल पर जब जाग उठा, तब उसी समय 'प्रेम' की भावना के प्रभाव के कारण उसमे पूर्णता आ गई । परतु शृगी और भृगी बुद्धि के अभाव मे उसी तरह अपूर्ण बने रहे । शकर और उसके अनुचरो द्वारा निर्मित कल्पना कम-से-कम साहित्य की दृष्टि से साधारण पाठको को भी अपूर्व प्रतीत होगी ।

अमीर-गरीब, अधिकारी और साधारण जनता, सिहासनाधीश राजा और लोगो का कल्याण करने की इच्छा से दुनिया मे स्वच्छद घूमनेवाले अनभिषिक्त राजा, इनका झगडा भी अनादिकाल से चला आ रहा है । सन् १९१९ के बाद इस झगडे को नागपुर के काग्रेस-अधिवेशन मे स्थायी विराट स्वरूप प्राप्त हुआ । उससे पहले की परिस्थिति का मेरे मन पर जो प्रभाव था, उसीसे इस कथानक को चुनने की मुझे स्फूर्ति हुई । सन १९१९ के मार्च महीने मे, जब गणेश नाटक मडली का श्रीगणेश इस नाटक से हुआ, तब यह नाटक 'नरकेसरी' के नाम से प्रकाशित हुआ था । उस समय यह गद्यात्मक था । जब यशवत सगीत नाटक मडली ने इसे सगीत नाटक के रूप मे रगमच पर प्रस्तुत किया, तब अपने मित्र श्री बन्या बापू कमतनूरकर के सुझाव से इसका नाम 'लयाचा लय' याने 'नाश का विनाश' रखा गया ।

नागपुर मे काग्रेस के क्रान्तिकारी अधिवेशन के समय यह सगीत-ना[illegible] खेला गया। यह भी एक प्रकार का सयोग ही है, ऐसा मुझे लगा।

यह नाटक पहले श्री मित्र के 'मनोरजन' नामक मासिक पत्र मे धारा-वाहिक रूप से प्रकाशित हुआ था और सन १९२३ मे पुस्तक रूप मे प्रकाशित हुआ था। इस नाटक की भूमिकाए अतिमानव स्वरूप की होने के कारण उस समय के बाद से यह अधिक नही खेला गया। सन १९६० मे, 'बलवत पुस्तक भडार' के मालिक और मेरे मित्र श्री त्र्यबकराव परचुरे इतने वर्षों के बाद इसे पुन मुद्रित कर, मेरे इस अत्यत प्रिय नाटक को प्रकाश मे लाये, इसके लिए मैं उनका आभारी हू।

आज हिंदी की सुप्रसिद्ध प्रकाशन-सस्था, सस्ता साहित्य मडल, इस नाटक को हिंदी मे प्रकाशित कर रही है, यह भी बडे हर्ष की बात है और इसके लिए मैं इस सस्था का भी आभारी हू।

—मामा वरेरकर

१९१, साऊथ एवेन्यू
नई दिल्ली
दिनाक १ जून १९६१

पात्र-परिचय

दक्ष	ब्रह्मा के द्वारा नियोजित प्रजापालक प्रजापति
प्रसती	दक्ष की पत्नी
सती	दक्ष की कन्या
कश्यप	दक्ष का राजपुरोहित
माया	योगिनी जो प्रसूती के मायके से दक्ष के घर आई थी
मन्मथ	कामदेव, प्रेम और काम का देवता
रति	. मन्मथ की पत्नी
शकर	कैलास के अधिपति, विश्व के सहार-कर्त्ता । फिर भी जगत-हित के कारण शिव और महादेव कहलाए
शृगी भृंगी	शकर के गण
पार्वती	दक्ष के यज्ञ मे प्राणान्त करके सती की आत्मा ने पार्वती के रूप मे जन्म लिया जो पर्वत-कन्या थी और पुन शिव की अर्द्धागिनी बनी।
अन्य	गधर्व आदि

प्रथम अंक

दृश्य एक

(कश्यप और मन्मथ का प्रवेश)

कश्यप मन्मथ, मैं यह नही कहता कि मती को हिमालय नही जाना चाहिए। प्रकृति-सौन्दर्य और मूर्त्तिमान प्रकृति-स्वरूपा सती का मौन्दर्य, दोनो का मनोहर एकीकरण देखने मैं भी चलता, परन्तु विवश हू । दक्षप्रजापति की इच्छा के विरुद्ध मैं नही जा मकता । ममार की उत्पत्ति का अत्यन्त कठिन कार्य पितामह ब्रह्मदेव ने दक्ष को सोपा है और उस कार्य मे महायता करने का मारा भार मुझ पर आ पडा हे । ऐसे ममय दक्ष का मुझ पर रुष्ट हो जाना और हम दोनो मे मन-मुटाव हो जाना ससार की उत्पत्ति के लिए महान घातक होगा ।

मन्मथ मती के माथ आपके हिमालय जाने मे आप और दक्ष मे मन-मुटाव क्यो हो जायगा, यही मैं नही ममझ पा रहा हू ।

कश्यप हम जैसे अनाथ भिखारियो को आश्रय देकर हमारा पालन-पोषण करने के लिए दक्ष हमेशा तैयार रहता है। परन्तु अनाथ भिखारी यदि अपनी दरिद्रता की शान दिखाने लगे, तो उसे अत्यन्त असहनीय हो उठेगा ।

मन्मथ मतलब ? मैं तो कुछ भी नही समझ पाया !

कश्यप आदिपुरुष शकरजी कैलास के अधिपति है, यह तो तुम जानते हो न ? वह वहाँ के राजा हे ।

मन्मथ शकरजी ? राजा ? शकरजी कब राजा हुए ?

कश्यप मैंने जब कहा था कि वे कैलाश के अधिपति है, उस ममय तुमने 'हू' कर दिया और अब तुम उन्हे राजा मानने को तैयार नही । यह क्यो ?

मन्मथ　शकरजी कैलास के राजा है, इसमे सदेह नही । परन्तु कैलास आखिर है क्या ? ससार का एक महा स्मशान ही है वह ! प्रजापति उत्पत्ति करते है और शकरजी विनाश का कार्य करने वाले मूर्तिमान प्रलय है ! वह राजा कैसे होगे ?

कश्यप　उत्पत्ति के वैभव मे जैसा राजत्व है, उसी तरह प्रलय के ताडव मे भी है । बल्कि हम यह भी कह सकते है कि प्रलय का वैभव जितना तेजस्वी है, उतना उत्पत्ति का नही । साराश यह कि शकरजी भी एक प्रकार के अधिराज है । उत्पत्ति के आयोजन का अधिकार मिल जाने के कारण दक्ष प्रजापति अन्य किसीका भी अधिकार स्वीकार करने को तैयार नही, और ससार मे दिन-प्रति-दिन यह पुकार शुरू हो जाने के कारण कि शकरजी ही महादेव है, शकरजी के प्रति दक्ष के मन मे मत्सर की आग भडक उठी है ।

मन्मथ　अच्छा ? तो ऐसी बात है ? अब कारण समझा ।

कश्यप　इसीलिए कहता हू कि मेरे हिमालय जाने से दक्ष के शकाशील मन मे यह शक हो जायगा कि वहा जाकर मैं शकर से मिल जाऊगा और उत्पत्ति के कार्य मे सहायता देने के बदले विनाश के कार्य मे हाथ बटाने लगूगा । इस भय से वह मुझे वहा कभी जाने ही न देगा ।

मन्मथ　हा, तब तो आप विवश है । मुझ अकेले को ही सती के साथ जाना होगा । पर कश्यपजी, मैं यह पूछना चाहता हू कि अपने साथ यदि मै रति को ले जाऊ, तो कोई हर्ज तो न होगा ?

कश्यप　बिल्कुल नही । एक तरह से यह अच्छा ही रहेगा । सती को अच्छा सग मिल जायगा ।

मन्मथ　हिमालय पर शकरजी के अनुचरो मे हमे कोई कष्ट तो नही होगा ?

कश्यप　छि ! छि ! बिल्कुल नही । भोले शकर बाबा के भोले अनुचर है वे । बेचारे तुम्हे क्या कष्ट देगे ? फिर भी भोले लोगो को न चिढाना ही अच्छा ! ये भोले लोग जबतक सीधे

हे, तबतक ठीक होते है, पर अगर कही चिढ उठे, तो प्रलय ही कर देते है ।

मन्मथ ऐसे पगलो की मै जरा भी परवा नही करता । अच्छा, अब यह बताइये, गकरजी के बारे मे आपकी क्या राय हे ?

कश्यप दक्ष के राज्य मे शकरजी के बारे मे क्या राय दे सकता हू ?

मन्मथ हा, यह तो मच है । दक्ष के समान वैभवशाली इस त्रिभुवन मे कोई नही ।

कश्यप अगर गकरजी के वैभव के बारे मे जानना चाहते हो तो वैभव से उनका कट्टर वैर हे । हिमालय पर यदि वह मूर्त्ति तुम्हे कही दिखाई दी, तो मे क्या कहता हू, यह तुम ममझ जाओगे ।

मन्मथ यदि उनकी और मती की भेट हो गई, तो कोई हर्ज तो नही ?

कश्यप . दक्षप्रजापति को अनाथ भिखारियो मे अत्यन्त घृणा है ।

मन्मथ पर आपकी क्या राय हे ?

कश्यप शकर और मती की भेट होना इष्ट हे या अनिष्ट, इस विषय मे मैं कुछ भी नही कह सकता । पर दक्ष को यह अनिष्ट प्रतीत होगा, इमका मुझे पूर्ण विश्वाम है ।

मन्मथ पर आपको कैमा लगेगा ?

कश्यप मेरा मत इस समय केवल दक्ष के मत पर अवलम्बित है । परतु थोडी देर के लिए यदि यह मान भी ले कि मेरा मत दक्ष मे भिन्न हे, फिर भी इममे क्या होगा ! शकर की सती से भेंट हो, चाहे न हो, बराबर ही है । गकरजी भोला शकर है । उन्हें शायद यह भी पता न होगा कि 'स्त्री' और 'पुरुष' जैमा कोई भेद अस्तित्व मे हे ।

मन्मथ (स्वगत) जबतक मन्मथ से पाला नही पडा हे, तभीतक यह शेखी है ! (प्रकट) तो मतलब यह हुआ कि अगर दोनो की भेट हो जाय, तो कोई आपत्ति नही ।

कश्यम ऐसा मैंने कहा कहा ? क्या मैंने यह नही कहा कि दक्ष को यह बिल्कुल अच्छा न लगेगा ।

मन्मथ ठीक हे । इसके लिए मैं उचित उपाय कर लूगा । अच्छा, तो

रति को भी साथ ले जाना तय रहा न ?

कश्यप मेरा ख्याल है, योगिनी मायावती भी साथ जाय तो बहुत अच्छा होगा।

मन्मथ कही आपका यह इरादा तो नही कि हम लोग आनन्द से न जाय ? समय-असमय उसके मुह से निकलनेवाली वेदान्त की बातो से मेरे रोगटे खडे हो जाते है।

कश्यप किसी-किसी के रोमाच भी खडे हो जाते होगे ! पर वह चर्चा ही अभी छोडो। चाहो तो उसे ले जाओ, न चाहो तो मत ले जाओ। परन्तु रति को अवश्य ले जाना। उसका साथ ही पर्याप्त है। मै अब चलता हू। ठीक से जाना। और हा, शकरजी के गणो से जरा बचकर रहना। समझे ? **(प्रस्थान)**

मन्मथ **(स्वगत)** कहता है शकर के गणो से बचकर रहना। क्यो बचकर रहना ? क्या इसलिए कि वे चिढ उठेगे ? अगर चिढ गए तो क्या कर लेगे हमारा ? इस बूढे को लगता है कि दुनिया की सारी अक्ल का खजाना उसीके हिस्से मे आया है। पर उसे याद रखना चाहिए कि इस मन्मथ को निर्मित करते समय ब्रह्माजी ने ससार को जीतने की शक्ति उसके एक दृष्टिक्षेप मे रख दी है। कितना घमड है इसे ! यज्ञ-योग के बल पर यह दक्ष के कार्य को स्वरूप देना चाहता है ? ऐसे करोडो यज्ञ यह करता रहे, पर सब बेकार है। जबतक इस मन्मथ की सहायता नही मिलेगी, तबतक दक्षप्रजापति के कार्य को किसी भी प्रकार का स्वरूप प्राप्त न हो सकेगा। यह इस बूढे को क्या मालूम ? कितना पागल है यह ! कहता है, शकरजी को स्त्री और पुरुष का भेद भी नही मालूम ! मालूम न भी हो शायद। परतु जबतक इस मन्मथ से पाला नही पडा है, तबतक ही यह बात है। दक्ष नही चाहता कि मै शकरजी से स्नेह-गाठ जोड। शायद यह उसे अच्छा नही लगेगा। परतु ऐसा अच्छा शिकार मै क्यो अपने हाथ से जाने दू ? दक्ष का आश्रित होकर भी हर बात मे उसीके मतानुसार वर्ताव करने के लिए

कम-से-कम मैं तैयार नही । जिसे जो पसद नही, उससे उसकी इच्छा के विरुद्ध भी वही करा देना, यह मेरा काम है। देखे, अब क्या होता है ? **(प्रकट)** अरे, महारानीजी ही यहा आ गई। साथ मे योगिनी भी है। **(प्रसूती और मायावती का प्रवेश)** मै आप ही से मिलने आ रहा था। कश्यपजी की अनुमति से हिमालय-भ्रमण की सारी तैयारी हो गई है।

माया अहाहा! उस नगराज का नाम सुनते ही मै रोमाचित हो उठती हू। इस आशा से कि अब उनके प्रत्यक्ष दर्शन भी होगे, मैं

मन्मथ : आप वह आशा छोड दे। कश्यपजी की आज्ञा है कि सती के साथ रति और मै, दोनो ही जायगे। तीसरा और कोई नही जायगा।

माया कश्यपजी का मुझ पर इतना क्रोध क्यो है? महादेव के दर्शन

मन्मथ इसीलिए! समझी! इसीलिए। कश्यपजी की इच्छा है कि सती महादेव के दर्शन न करे।

प्रसूती : कश्यपजी की ऐसी इच्छा! आश्चर्य है! हमारे राज्य मे महादेव की प्रशसा करने का साहस करनेवाले अगर कोई हैं तो केवल दो है। एक है कश्यपजी और एक यह। **(मायावती की ओर उंगली दिखाती है।)**

मन्मथ इसीलिए इन दो व्यक्तियो को सती के साथ नही जाना चाहिए।

माया : अगर देव की यही इच्छा है तो मैं क्या कर सकती हू? निराश भी क्यो होऊ? परन्तु महारानी, हिमालय की याद आते ही मेरी देह पुलकित हो उठती है। निर्मल सुन्दर और शुभ्र हिमखड पर शुभ्र भस्म से विभूषित वह गौराग मूर्त्ति खडी है और उसके निकट ही सती की उग्र रमणीय मूर्त्ति उस शोभा को द्विगुणित कर रही है—ऐसा दृश्य मेरी आखो के सामने मूर्त्त हो उठता है। (आखें बन्द करके) शुभ्र वर्ण वृषभ पर आरूढ, शुभ्र हिम-तुषारो का मुकुट पहने, शुभ्रवर्ण महादेव, उनके अक मे शुभ्र वर्ण सती, चारो ओर शुभ्र वर्ण **पारषद,** शुभ्र वर्ण नभमण्डल मे देदीप्यमान शुभ्र वर्ण चन्द्रमा अपनी

शुभ्रतर किरणो से दोनो को मगल स्नान करा रहा है

मन्मथ · ह ह । योगिनी, यह दक्षप्रजापति का राज्य हे । क्या आपको विश्वास है कि शुभ्रवर्ण का यह शकर दक्षजी को पसद होगा ?

माया : दक्ष को जो पसद हो, वह मारे ससार को पसद होना ही चाहिए, ऐसा विधाता ने कही बधन नही रखा ।

मन्मथ : विधाता के बधन की अपेक्षा प्रजापति का बधन अधिक कठिन है। आप माथ न चले, ऐसा जो मुझे लगा

माया : तुम्हे लगा ?

मन्मथ : हा, मुझे लगा और उस रुख से ही मैंने कश्यपजी से पूछा और उस रुख से ही उन्होने मुझे अनुमति दी । आपके साथ रहने से हिमालय का वैभव देखना तो एक ओर रखा रह जायगा, सती को भयकर गरीबी देखते रहनी पडेगी । ऐसा पहले मेरा सिर्फ अनुमान था । पर अब विश्वास हो गया है ।

माया · ठीक है । महारानीजी, मैं जिस आशा को लेकर सती के साथ जाना चाह रही थी, उस आशा के सफल होने की आज यद्यपि कोई सभावना नही दीख रही है, फिर भी खैर, जाओ मन्मथ, तुम्ही सती के साथ जाओ । कौन कह सकता है, कदाचित विधाता यही चाहता हो कि जो काम मुझसे न बन पडता, वह तुम्हारे हाथ से हो ? जाओ मन्मथ, तुम्ही साथ जाओ । रति को भी साथ ले जाओ और हिमालय का काव्यमय-सौन्दर्य देखते समय इस मायावती का भी स्मरण रखना, इसीमे मुझे सतोष है । **(जाती है ।)**

प्रसूती : योगिनीजी को क्रोध तो नही आ गया ?

मन्मथ : ऐसा तो नही कह सकते कि क्रोध आया होगा । पर वह निराश अवश्य हो गई हैं । खैर, जाने दीजिए । आप कोई चिंता न करे । सती की सुरक्षा का सारा भार मैंने ले लिया है । रति मेरे साथ जायगी ही ।

प्रसूती : मन्मथ, यह कोई असगुन तो नही है । मुझे वडा डर लगता है । सती भी वडी जिद्दी है । उसके मन मे जो आ जाता है, उसे पूरा

किये बिना वह चैन नही लेती । महाराज की इच्छा है कि वह हिमालय न जाय । जो उनकी इच्छा है, वही मेरी भी है । पर हम दोनो की सुनता कौन है ? अच्छा, मानलो हमने उससे कहा भी कि हिमालय मत जा, तो कौन वह हमारी बात मान लेगी ? जैसे-तैसे मैंने महाराज को राजी किया, तब कही वह शान्त हुई ।

मन्मथ प्रजापतिजी ऐसे भिखमगो को इतना महत्त्व आखिर क्यो दे रहे हैं, मैं कुछ समझ नही पाता । सती इतनी पगली नही कि उस प्राचीन भिखारी को देखकर उसपर मोहित हो जाय ।

प्रसूती छि -छि , प्रश्न मोहित होने का नही है । डर यह लगता है कि वहा वह पगला या उसके अनुचर सती का अपमान न कर दें ।

मन्मथ करने दीजिए उन्हे अपमान ! हम भी देख लेगे । इसके लिए उन्हे उचित दण्ड देने को प्रजापति के अनुचरो मे भी भरपूर शक्ति है । महारानीजी, आप कोई चिता न करें । इस मन्मथ के साथ होने पर किसी भी पुरुष से सती को भय नही । **(दक्ष आता है ।)**

दक्ष मन्मथ ! सती और भय, ये दो शब्द एक साथ लाना कायरता का लक्षण है । सती अतुल प्रतापशाली दक्ष की कन्या है । उसे भयप्रद लगनेवाला व्यक्ति इस त्रिभुवन मे कोई नही ।

मन्मथ मैं भी यही कहता हू । हर व्यक्ति व्यर्थ ही शकर के भय का इतना ढिढोरा पीट रहा है कि मुझे ऐसा लगने लगा है, कि कही मैं भी उससे सचमुच न डरने लगू ।

दक्ष तुम्हे ऐसा लगेगा ही । तुम मे पौरुष की प्रबलता नही है या स्त्रीत्व का आधिक्य है, यही ठीक से समझ मे नही आता ।

मन्मथ यह कहने मे कि दोनो बराबर है, काम चल जायगा । पर देव, शकर क्या सचमुच इतना भयप्रद प्राणी है ?

दक्ष जिसे भय का भय नही, उसे शकर से भय क्यो होगा ? कम-से-कम मैं तो शकर से जरा भी नही डरता । हिमालय के उच्चतम शिखर पर रहनेवाले उस मनुष्य रूपी गिद्ध को देखकर, बहुत

हुआ तो भूत-प्रेत डर जायगे । परतु मेरी दृष्टि मे, एक फूक से पानी हो जानेवाले हिमालय के हिमकणो के बराबर ही उसकी योग्यता है ।

प्रसूती फिर आप सती को हिमालय जाने मे क्यो रोक रहे थे ?

दक्ष क्यो न रोकता ? हिमालय भूतो और भिखारियो की नगरी है । वैभवशाली लोग यदि ऐसे स्थान मे चरण रखे तो यह भिखारियो को बडप्पन देना होगा । हम वैभव का विभव जिस तरह अनुभव करते है, उसी तरह रक का दारिद्रय ऑखो के सामने भी नही लाते । दारिद्रय का सपर्क महामारी की तरह ससर्गजन्य है । भावना-प्रधान वैभवशाली व्यक्ति यदि दरिद्रता का नित्य दर्शन करे, तो उसमे दरिद्र होने की लालसा उत्पन्न होने लगेगी । सती का स्वभाव भी भावना-प्रधान है । हिमालय का काव्यमय सौन्दर्य देखकर, उसे वहा आवश्यकता से अधिक दिन रहने की पगली इच्छा होने लगेगी ।

प्रसूती तो आप भी मानते है कि हिमालय का सौन्दर्य काव्यमय है ?

दक्ष देवी, हम जितने सौन्दर्य के उपासक है , उतने काव्य के नही । शायद कोई यह कहे कि सौन्दर्य और काव्य, ये दो भावनाए एक दूसरे से अभिन्न है । ऐसा हो भी शायद । पर हम जिसे सौन्दर्य कहते है, उसका काव्य से कोई सबध नही

प्रसूती आप तो जाने क्या कह रहे है !

मन्मथ देवी, दास की प्रार्थना है आप कोई चिन्ता न करे । हिमालय पर सती अधिक दिन वास न करे, इसकी जिम्मेदारी मै लेता हू ।

दक्ष मन्मथ, सती कितनी जिद्दी है, क्या इसकी तुम्हे कोई कल्पना भी है ?

मन्मथ है महाराज !

दक्ष बिल्कुल नही ! सती को तुम यदि पहचानते होते तो इतनी जल्दी 'है महाराज' न कहते । मै कितना जिद्दी हू, यह जानते हो तुम ?

मन्मथ जीहा, पूरी तरह जानता हू ।

दक्ष तो वह मेरी कन्या है, यह ध्यान मे रखो और उसकी इच्छा का विरोध करके उसकी जिद मत बढने देना ।

मन्मथ (स्वगत) एक रहस्य तो मालूम हुआ ! (प्रकट) जो आज्ञा !

दक्ष देवी, चलो । हिमालय जाने से पहले मैं सती से दो शब्द कहना चाहता हू । मै पहले उसीके पास जानेवाला था । पर कश्यप के यह बताने पर कि रति और मन्मथ भी उसके साथ जा रहे हैं, मैंने सोचा, पहले मन्मथ से मिल लू और यहा चला आया । चलो । (दोनो जाते है ।)

मन्मथ (स्वगत) बडी कठिनाई आ गई । अब बैर किससे करू ? मायावती से ? छि ! उससे बैर करने मे क्या पुरुषार्थ है ? शकरजी से ? परतु शकरजी कैसे है, यह सिर्फ सुनी हुई बात से ही मुझे मालूम है । फिर क्या दक्षप्रजापति से ? अपने स्वामी से ? मुझमे पुरुषार्थ का प्राबल्य न कहनेवाले अपने स्वामी से ? यदि यह सिद्ध करना है कि मुझमे पुरुषार्थ का प्राबल्य नही है अथवा मेरा प्राबल्य ही पुरुषार्थ है, तो स्त्री-पुरुष का भेद न जाननेवाले शकर के गले मे सती को बाधे बिना दूसरा चारा नही । विरोध मेरा जीवन है और सम्मिलन मेरा कार्य है । विरोध का सम्मिलन न हुआ, तो मन्मथ का अस्तित्व ही किस काम का ? पर सती का इससे कल्याण होगा या अकल्याण होगा ? कौन जाने क्या होगा ? आगे का विचार करने की मुझे क्या आवश्यकता ? परतु इसमे एक तरफ से मुझे हार माननी पडेगी । ऐस हुआ तो मायावती की इच्छा अवश्य पूरी हो जायगी और उससे मुझे अत्यन्त घृणा है । जीत जाने दो उसे, कोई हर्ज नही । लडना शक्तिशालियो से ही चाहिए— अनाथो को कुचलने मे क्या पुरुषार्थ है ? बस, यही तय रहा । हे आदिपुरुष शकर, इस मन्मथ ने अब तुम्हारी ओर दृष्टि घुमाई है और दक्ष के दर्प की परीक्षा के लिए वह तुमसे निकष का कार्य लेनेवाला है । (जाता है ।)

दृश्य दो

(कैलास की तलहटी)

(शृगी और भृगी)

शृगी   सच कहता हू तुमसे, ऐसे प्राणी मैने आजतक कभी नही देखे थे।

भृंगी   देव के दर्शन के लिए आये कोई तपस्वी होगे।

शृगी   नही जी, क्या मै इतना भी नही पहचानता ? आजतक अनेक ऋषि-मुनि और तपस्वी मेरे सामने आये है, और बहुतो को स्वय देव के पास ले गया हू, पर यहा वात ही कुछ अलग है। है तीन ही प्राणी, पर तीनो तीन प्रकार के है।

भृगी   उनका ठीक से वर्णन करके तो बताओ मुझे।

शृगी   एक, एक है जरा लबा-चौडा, चेहरा अत्यन्त सुदर है, और क्या बताऊ तुम्हे, बिल्कुल भिखारी दीखते है तीनो। किसी के भी न मूछे है, न दाढी। एक के सिर पर कुछ जटाभार-सा मालूम होता है। पर ऐसा लगता है जैसे सारे जुगनू ही उस पर बैठ कर चमक रहे है। उसकी देह का चमकदार चमडा घुटनो तक लटक रहा था और उसका रग था तोते के पख की तरह। दूसरे दो कौन थे, यही मै नही समझ पाया और उनका वर्णन मै कर पाऊगा, ऐसा मुझे नही लगता।

भृंगी   अरे भई, थोडा प्रयत्न करके तो देखो।

शृंगी   (सिर खुजाकर) छि, वह नही बनता। दोनो, दोनो तरफ से कुछ फूले हुए होगे ऐसा लगा। उनके शरीर पर के चीथडे आगे-पीछे लटक रहे थे। शरीर पर जगह-जगह जुगनू चमक रहे थे। और उनमे जो एक छोटा-सा प्राणी था, उसके चेहरे की ओर देखने से तो बडा अजीब-सा लगता था। छि, भई, उसका वर्णन करते ही नही बनता।

भृंगी   बडा आश्चर्य है। कौन होगे वे ?

शृंगी   कुछ कह नही सकते। अगर उन्हे मनुष्य कहे तो उनके सीग नही थे।

भृंगी तुम्हारे एक सींग है तो इसका मतलब यह नहीं कि सभी मनुष्यों के सींग होते हैं ।

शृंगी मैं मनुष्य हूं हीं नहीं । तुम्हारे सींग नहीं, इसलिए तुम कोई नहीं और नंदी के दो सींग है, इसलिए वह महादेव का वाहन हुआ । अहाहा ! मेरे एक सींग और होता तो क्या ही मजा आ जाता !

भृंगी एक ही सींग से तुम्हारा पशुत्व जब इतना खिलकर दीख रहा है

शृंगी परंतु देव की मुझपर जो अधिक कृपा हे, वह आखिर इस सींग के ही कारण है न ?

भृंगी हमारे देव को पशु अधिक प्रिय है, इसमें सन्देह नहीं ।

शृंगी देव को पशु प्रिय हे, इसीलिए मुझे पशुत्व अच्छा लगता है । पर तुम कौन उन्हें अप्रिय हो ।

भृंगी वैसे देखा जाय तो देव सभी के प्रति सम्मान-भाव रखते हे । इस विषय मे वह कोई भेद-भाव नहीं करते ।

शृंगी अच्छा, इन बातो को छोडो । परंतु वे प्राणी—अरे देखो, उनमे के दो प्राणी इसी तरफ आ रहे है । चलो, पहले यहां से हटो ।

(रति और मन्मथ प्रवेश करते हैं ।)

रति क्या ही विचित्र स्वभाव हे ! कितना भयंकर शिखर है यह ! पर हमारी बात न मानकर सती जल्दी-जल्दी पहले ही ऊपर चढ आई और हमे इतना समय लग गया !

मन्मथ जिद्दी मनुष्यों की यही आदत होती हे । जिस काम को करने से हम उन्हे रोकते हैं, उसको वे अवश्य करते हे । परंतु उसका यह काम मेरे हित का ही है ।

रति सो कैसे ?

मन्मथ योगिनी के मुंह से काव्यमय वर्णन सुनकर हिमालय पर्वत देखने की सती की उत्कण्ठा बढी । इस हिमालय के एक अत्यन्त उच्च शिखर पर, जिसे कैलास कहते है, शंकर नाम का एक पुरुष रहता हे । कोई कहते हे, वह आदि पुरुष है । कोई उसे महादेव, याने सब देवों मे बडा देव कहते है । कश्यपजी मुझसे कह रहे

थे कि इस शकर को स्त्री और पुरुष, यह भेद ही विल्कुल नही मालूम....

रति क्या कहा ! स्त्री-पुरुष, यह भेद नही मालूम ? स्त्री के सहवास के विना इस वीरान प्रदेश मे उससे आखिर रहा कैसे जाता है !

मन्मथ मै भी तो यही कह रहा हू । स्त्री पुरुष की अर्द्धांगिनि है । स्त्री पुरुष की देवी है । स्त्री पुरुष का जीवन है । ऐसे रमणीय सहवास के अभाव मे बेचारे शकर को क्या कष्ट होते होगे, इसकी तुम्ही कल्पना करो । मुझे उस पर दया आती है । सती अनायास ही यहा आ गई है । इसलिए मै सोच रहा हू ..

रति (वात बीच में काटकर) कि यह जोडी जमा दी जाय । विचार तो वडा अच्छा है । परन्तु दक्षप्रजापति इस शकर से अत्यन्त घृणा करते है, ऐसी मेरी धारणा है ।

मन्मथ जहा रुकावटे और वाधाए है, वही मेरा कार्य-क्षेत्र होता है । मेरी यह टेक तुम भी जानती हो । अव इस कार्य मे मुझे तुम्हारी सहायता की आवश्यकता है । शकर को स्त्री की कल्पना नही है । पर सती को पुरुष की कल्पना न हो, यह वात नही । उसका स्वभाव कुल मिलाकर पुरुष जैसा ही है । वह इतनी वडी हो गई है, पर स्वभाव से अभी वालिका की तरह ही अल्हड है । अव हमे किसी-न-किसी तरह शकर से मिलना चाहिए । आगे किस प्रकार क्या करना है, यह तुम्हे उस-उस प्रसग पर आप-ही-आप मालूम हो जायगा ।

रति सती के मन मे शकर के प्रति प्रेम उत्पन्न कराना चाहते हो न ? तो यह काम मेरे जिम्मे रहा । पर यह शकर दीखने मे कैसा है ?

मन्मथ यह तो मुझे भी नही मालूम । प्रकृति ने उसे जो भी सौन्दर्य दिया है, उतना ही उसके पास होगा । कृत्रिम सौन्दर्य के साधनो का उसे कोई पता ही न होगा, ऐसा मै सोचता हूं; क्योकि ससार के एक महान भिखारी के नाते वह विख्यात है ।

रति तव तो समस्या वडी कठिन है । पर यह सती आखिर गई कहा ?

भृंगी (भृगी आगे वढता है । भृगी डरते-डरते उसके पीछे खड़ा हो

जाता है ।) महाराज, आप कौन हे और इस कैलास पर आपका आगमन क्यों हुआ ?

मन्मथ हम दक्षप्रजापति के गण हैं । अपने महाराज की कन्या के साथ हिमालय देखने आए है ।

भृंगी कन्या ! कन्या क्या होती है ?

मन्मथ कन्या याने महाराज की रानी के गर्भ से पैदा हुई उनकी लडकी ।

भृंगी आपका एक शब्द भी मैं नही समझा ।

रति मैं तुम्हे क्या लगती हूं ? मैं कौन हूं ?

भृंगी यही तो मेरी समझ मे नही आ रहा है ? क्योजी भृंगी, यह कौन प्राणी हे ?

भृंगी अरे भई, मैं क्या जानू ? मेरे लिए भी यह एक पहेली ही है ।

मन्मथ यह मेरी स्त्री है ।

भृंगी याने यह आपकी कन्या है शायद ?

मन्मथ नही जी, यह अपने पिता की कन्या है और मेरी पत्नी है ।

भृंगी पिता की कन्या ? जगत-पिता हमारे महादेव है । क्या यह उन्हीकी कन्या है ?

मन्मथ अरे बाबा, ससार मे पिता बहुत है ।

भृंगी चुप रहो । जगत-पिता केवल एक महादेव हैं । उन्होने मात्र इच्छा से यह चराचर जगत निर्मित किया है ।

मन्मथ परतु चराचर निर्मित करनेवाले और भी बहुत से पिता हैं ।

भृंगी हमारे महादेव उनका सहार करेगे ।

मन्मथ सहार करेगे यह सच है । परतु पहले सब स्त्री-पुरुष निर्मित तो हो जाने चाहिए न ?

भृंगी पुन आप यह 'स्त्री' ले आए ।

रति इधर देखिये, मैं स्त्री हू और यह (**मन्मथ की ओर अंगुली दिखाकर**) पुरुष हैं ।

भृंगी और हम कौन हैं ?

मन्मथ आपको जब स्त्री मिलेगी, तब आप भी पुरुष हो जायगे ।

भृंगी तो मैं इससे मिलू ?

मन्मथ अजी, यह मेरी स्त्री है। पराये पुरुष को उसे स्पर्श भी न करना चाहिए ।

भृगी छि ! यहा तो मेरा मस्तिष्क ही कुछ काम नही करता। आप क्या कह रहे है, कुछ समझ ही मे नही आता।

मन्मथ देखिये, यह आपकी दाढी है ? यह दाढी कभी भी मेरी नही हो सकेगी अथवा आप भी किसी दूसरे को इसे हाथ नही लगाने देगे ।

भृगी पर यह दाढी मेरी चिबुक से चिपकी हुई जो है।

मन्मथ जिस तरह यह दाढी देह की दृष्टि से, आपसे अभिन्न है, उसी तरह मेरी यह स्त्री आत्मा की दृष्टि से, मुझसे अभिन्न है। याने यह मेरी अर्धांगिनि है ।

भृगी हा, अब समझ गया। यह और आप दोनो की आत्मा एक हो गई है ।

मन्मथ हा, अब आप बिल्कुल ठीक समझे । परन्तु मुझे आश्चर्य यह होता है कि इससे पहले आपकी समझ मे यह कैसे नही आया ?

भृगी ऐसे प्राणी अभीतक यहा निर्मित नही हुए है।

रति क्या महादेव की कोई अर्धांगिनि नही ?

भृगी नही, बिल्कुल नही । और उसकी हम लोगो को अभीतक कोई आवश्यकता भी प्रतीत नही हुई ।

रति तब तो यही कहना पडेगा कि आप लोग बडे अभागे है। अर्धांगिनि नही ? बडा आश्चर्य है ।

भृगी क्योजी, क्या प्रत्येक की एक अर्धांगिनि होनी ही चाहिए ? फिर हमारे देव को भी एक अर्धांगिनि ला दीजिए न । इस प्रदेश मे एक भी स्त्री नही। बडे-बडे देवदार के वृक्ष है, भूर्ज वृक्ष है, सुमेर जैसे पर्वत है, नदिया है, शेर है और भी अनेक प्रकार के जानवर है। परतु स्त्री एक भी नही ।

मन्मथ हा, हमारे साथ अभी एक ऐसी स्त्री आई थी । मार्ग मे हमारा उसका साथ छूट गया । क्या आपको वह कही दीखी थी ? आपके देव कहा है ? उन्हे दीखी हो शायद, चलकर उन्हीसे पूछे ।

श्रृंगी महादेव अभी थोडी देर पहले इसी मार्ग मे उस उच्च शिखर पर (देखता है और कुछ चौंककर) देखिये-देखिये—उधर ऊपर देखिये। वह हमारे महादेव है और आपके साथ आई स्त्री भी उन्हींके समीप खडी है।

मन्मथ क्या कह रहे हो ? शकर से सती की भेट हो गई ? रति और मन्मथ की मध्यस्थता के बिना ही सती ने शकर से भेट कर ली ? (एक तरफ) प्रिये, धोखा हो गया। अव क्या करू ? उन दोनो के हृदयो मे यदि निष्काम प्रेम का उपक्रम हो गया होगा तो मेरे पाचो बाण अब व्यर्थ हो जायगे। (प्रकट) चलो-चलो, हम पहले महादेव का दर्शन करे। आप लोग चलिये, हमे मार्ग दिखाइए

श्रृंगी आइये–आइये, हमारे पीछे-पीछे चले आइए। (जाते है।) (एक शिलाखड पर शकर और सती खड़े हुए दिखाई देते है।)

शकर अतिथि, सारे ससार मे दरिद्रो के चक्रवर्ती राजा के नाते मैं विख्यात हू। पैशाचिक प्रकृति के अरण्यवासी गण मेरे अनुचर है। मेरे रहने के लिए घर भी नही। जिस तरह मै चाहे जहा रहता हू, उसी तरह मेरे अनुयायी भी चाहे जहा रह जाते है। यहा घर का बधन नही, उपजीविका की कोई रुकावट नही, परिवार का उपसर्ग नही। है केवल आनद का साम्राज्य।

सती आपके इस एक ही उत्तर मे मेरे सारे प्रश्नो का निराकरण हो गया।

शकर अतिथि, यदि यह कहू कि आपने बाह्य ससार की जो कल्पना मुझे दी है, उसे मै ठीक से नही समझ पाया हू, तो कोई हर्ज नही। मुझे यह कल्पना ही न थी कि उपजीविका के लिए किसी को इतना कठिन परिश्रम करना पडता होगा। आनद ही जीवन की परिचर्या और आनद ही ससार की उपजीविका है, ऐसा मेरा अनुभव है

सती कितना आनदमय स्थान है यह। जहा देखिये वहा आनद जैसे मूर्तिमान होकर नाच रहा है। गगन को चूमना चाह रहे

ये देवदार के वृक्ष आनद से झूम रहे है। अपने ही आनद मे खोये हुए गिरि-कदराओ मे बहनेवाले ये नन्हे-नन्हे जल-प्रपात जहा-तहा जैसे आनद का छिडकाव कर रहे हैं। निःस्तब्ध आनद की विशाल कालशून्यता को जाग्रत करने के लिए प्रसन्न हिमखण्ड ऊचे शिखर से, कारण न होते हुए भी धडाधड ढह रहे है। इस सब आनद के बीच देव, आपकी आनदमयी मूर्त्ति देखकर, क्षण मे जम जानेवाले यहा के जल-प्रवाह के समान, मैं भी इस आनद मे जम जाऊ, ऐसा मुझे लगने लगा है।

शंकर अतिथि, आपकी बातो से मेरे आनद-सागर मे तरगे क्यो उमडने लगी? मेरे गण नित्य मेरी प्रशसा करते हैं। उनकी बातो मे मेरा समाधि-मग्न मन कभी उत्तेजित नही होता। पर आप मेरा निर्देश भी करती है तो भी मेरे हृदय मे आनद की लहरो का एक तूफान उठने लगता है। ऐसा क्यो होना चाहिए?

सती देव, आपकी मूर्त्ति देखने के बाद से मेरे मन की तो बडी विलक्षण स्थिति हो गई है। परिचय न होते हुए भी आपने मेरा बड़े प्रेम से स्वागत किया। यह न जानते हुए कि मैं योग्य हूं या अयोग्य, अपने अतरग मित्र की तरह मेरे साथ आपने बर्ताव किया। सो क्यो?

शंकर यही तो मैं भी नही समझ पा रहा हू। आपने क्या कहा? परिचय न होते हुए मैंने स्वागत किया? सच, क्या मेरा और आपका परिचय नही था?

सती जी नही। हमारा सचमुच परिचय नही था। मैंने आजतक कभी हिमालय नही देखा था, फिर कैलास की तो बात ही क्या? आप इस स्थान को छोडकर और कही गये ही नही थे। फिर आपको मेरा परिचय कैसे होता?

शंकर तो मतलब यह कि इसके बाहर भी ससार है? होगा शायद। अतिथि, इसके बाहर ससार अवश्य होगा। मैं यहा के आनद मे उन्मत्तता से स्वच्छद घूमता रहता हूं। इस कारण कोई बाह्य ससार है, इसका ज्ञान भी मैं अपने को नही होने देता था।

आनद मे मस्त होकर जब मैं अपने आपको भूल जाता हू, उस समय असख्य जीवो की हृदयभेदक चीखे मुझे पुन होश मे ला देती हैं। मुझे लगने लगता है कि अधकार के प्रचड ताडव के कारण वे जीव मार्ग भूलकर एक ही केन्द्र की ओर गिडगिडाहट भरी दृष्टि से ताक रहे है। वे मुझे ही ताक रहे होगे, ऐसा मुझे प्रतीत होता है ओर उनके उस करुणाजनक दृष्टिपात से मेरा हृदय द्रवीभूत होकर मै होश मे आ जाता हूं। परतु जाग्रत होते ही मुझे चहु ओर पुन आनद का साम्राज्य दीखने लगता है।

सती अब समझी। दक्षप्रजापति उत्पत्ति-कार्य जानबूझकर कर रहे हे। पर आप अपने आनद के आवेश मे उत्पत्ति, स्थिति और लय कर रहे है और आपको इसका बोध तक नही। दक्ष-प्रजापति का अभिमान व्यर्थ है।

शकर मैं कुछ भी नही करता। मेरी कभी यह इच्छा नही होती कि किसी का कुछ हो। और कही कुछ होता रहता है, यह आप ही के मुह से मै प्रथम बार जान रहा हू।

सती मुझे यह सब वडा विलक्षण प्रतीत होता है। आप यह कहते अवश्य है कि मेरी बातें आप नही समझते। परतु आपका जीवन मुझे एक आनदमय रहस्य ही लगता है।

शकर आनद कहते ही मुझे आनद होता है। पर अतिथि, आपके मुह से निकला हुआ 'आनद' शब्द सुनते ही मुझे क्या होता है, यही मैं नही समझ पाता। पुन: एक बार केवल 'आनद' कहिये तो!

सती आनद आनद आनद!

शंकर यह क्या हो रहा है? मुझे क्या हो गया? अतिथि, मेरी देह अव मुझसे सभाली नही जा रही है। मुझे कसकर पकड लीजिए (**आंखें मूदकर**) आनद. .आनद ..आनद। (**सती उसे कसकर पकड़े हुए आंखें बदकर खडी रहती है। इसी समय मन्मथ, रति, भृंगी और भृगी आते हैं।**)

मन्मथ क्योजी, क्या तुम्हारे देव सो गए हैं?

भृंगी देव के पास कौन है यह?

रति यहा क्या खडे-खडे ही सोने की रीति है ? क्योजी, बोलते क्यो नही ?

भृगी उनके पास कौन है ? और असमय ही देव समाधिस्थ कैसे हो गए ?

रति आप अपने देव को कृपाकर जगा दीजिए ।

भृगी समीप कौन है ? अच्छा, समझा ? यही है वह स्त्री—भृगी अरे, यह स्त्री देव से मिली । अब हमारे देव पुरुष हो गए । जय शकर ! अरे भृगी, हमारे देव को अर्धागिनी मिल गई । जय शकर ! हर हर हर महादेव ! **(दोनो चिल्लाते हैं । शकर जाग उठते हैं । मन्मथ उनके पैरो से बाण स्पर्श करके हाथ जोड़कर खडा हो जाता है और रति सती का हाथ पकड लेती है ।)**

रति अरी पगली, यह क्या किया ? पराये पुरुष से आलिगन ?

मन्मथ देव, यह अल्प भेट स्वीकार कीजिए । **(बाण चरणो के पास रख देता है ।)** इस दास को आशीर्वाद दीजिये ।

शंकर पधारिये-पधारिये अतिथि, इस कैलास पर आपका स्वागत करता हू । **(स्वगत)** यह क्या हुआ ? कुछ समय पहले का मेरा आनद कहा चला गया !

मन्मथ बिना कुछ अर्पण किए देव की भेट नही लेनी चाहिए, ऐसी हमारी परिपाटी है । उसके अनुसार ये पाच बाण

शंकर इन्हे अपने पास ही रहने दीजिए ।

मन्मथ निवेदन है कि देव इन्हे स्वीकार करे ।

शकर भृगी जब मुझे फल अर्पित करता है, तब उनमे के आधे खाकर बचे हुए फल मैं उसे दे देता हूं । पर इन बाणो का मै क्या करू ? अजी अतिथिजी—**(सती को पास न देखकर)** यह क्या ? आप दूर क्यो चली गई ? आइये-इधर आइये, बिल्कुल मेरे पास बैठिये । **(सती पास बैठ जाती है ।)**

रति अरी पगली सती, यह क्या ? पर-पुरुष से इतना सटकर बैठना !

मन्मथ देव, पहले मेरी यह भेट स्वीकार कीजिए ।

शकर (सती से) अतिथि, इन वाणो का

रति देव, इसका नाम सती है ।

शकर सच ? क्या प्रत्येक का नाम होता है ? अर्जी अतिथि—नही, सती—मुझे कोई शकर कहते है, कोई महादेव कहते है । क्या आपने मेरा नदी देखा है ? भृगी

मन्मथ देव पहिले आप यह भेट स्वीकार

शकर सती, इस भेट को मै कैसे स्वीकार करु ? ये कोई फल नही । ये अतिथि तो वडे प्रेम से—अरे हा,—आपका नाम क्या है ?

मन्मथ मेरा नाम है, मन्मथ ।

शकर (रति से) और आपका ?

रति यह क्या देव ? आप हमे आदरसूचक शब्दो से सवोधित न कीजिये । मेरा नाम रति है ।

शकर कैसा पागल हूं मै ? प्रत्येक का नाम होता है, यह मै बिल्कुल भूल ही गया था । अहाहा ! सती ! कितना मीठा नाम है । सती, तुमने पहले ही मुझे अपना नाम क्यो नही वताया ?

सती आपको देखते ही मै अपने आपको ही भूल गई थी । फिर नाम और रूप का मुझे कैसे स्मरण होता ?

शकर नही-नही ! नाम तो पहले वताना था । नाम मे ही तो मिठास है । पर मै तुम्हे कैसे दोष दू ? मैने भी कहा तुम्हे अपना नाम वताया था ?

सती क्यो नही वताया ?

शकर क्यो नही वताया ? पगली—अरे, पर मैने यह क्या कह दिया ? रति ने तुम्हे पगली कहा तो मै भी तुम्हे पागल की तरह पगली कहने लगा !

सती ऐसा क्यो कहते है ? जव आपने मुझे पगली कहा, तव मुझे वडा आनद आया !

शकर सच ? तो अरी पगली, मै भी तुम्हे देखते ही अपना नाम भूल गया था ।

मन्मथ देव, आप इन वाणो को भी भूल गए ।

शंकर अरे पगले, मै बाण भी भूल गया। सती, अब तुम्ही बताओ, इन बाणो को मैं किस तरह स्वीकार करू ?

रति देव, यह मैं बताती हूं। कोई जब आपको फल अर्पण करता है, तो आप उनका सेवन करते हैं। जब कोई जल अर्पित करता है, तो आप उसे प्राशन करते हैं। अब बाणो को बाणो की तरह ही स्वीकार करना चाहिए। फल खाने के लिए है, जल पीने के लिए है, फूल शोभा और सुवास के लिए है। उसी तरह बाण छिद जाने के लिए है। धनुष की प्रत्यचा पर बैठकर ही उन्हे आपकी देह को स्पर्श करना चाहिए।

शकर ठीक है। मन्मथ, इन बाणो को धनुश पर चढाकर मेरे हृदय को बेध दो।

सती यह आप क्या कह रहे है, देव ? रति, कैसी पगली हो तुम ? देव का दर्शन करने के बाद हमे उनकी सेवा करनी चाहिए या उन पर शस्त्र उठाना चाहिए ?

रति अरी पगली, इन बाणो की नोक देख। इनमे अन्य बाणों की तरह लोहे की घातक नोक नही है, बल्कि मनुष्य के आह्लादिक श्वास से भी जो एक क्षण मे कुम्हला जाते है, ऐसे मनोहर और कोमल पुष्पो के बने है ये।

सती फिर भी देव पर बाण चलाना आतिथ्य का अतिक्रमण करना होगा। तुम दोनो के मस्तिष्क बिगड गए है। तुम्हारे मस्तिष्क तो कभी ठिकाने पर रहते ही नही। परतु एक क्षण के लिए भी, जिसे तुम्हारा सहवास हो जाता है, उसे भी तुम पागल कर देते हो।

शंकर इसमे पागल कर देने की कोई बात नही। कोई किसी भी प्रकार से मेरी पूजा करे, तो उसे स्वीकार करने के लिए मैं सदैव उत्कंठित रहता हूं।

मन्मथ : देव, यह आपकी महानता है। पर हम आपके दास हैं। आप पर शस्त्र कैसे उठा सकते है ?

सती यदि तुम यह समझते थे तो बाणो की ही भेट क्यो लाये ? बाणो

को छोडकर क्या और कोई वस्तु तुम्हे नही मिली भेट देने को ?

मन्मथ देव को देना है तो अपना सर्वस्व दे देना चाहिए । ये पाच वाण ही मेरे सर्वस्व हैं । जब किसी युद्ध मे जाना होता है, तब इन्ही पाच वाणो से मुझे अपना कार्य पूरा कर लेना पडता है, क्योकि प्रजापति की आज्ञा है कि मुझे छठवा वाण दिया ही न जाय । इसलिए अपना यह सर्वस्व ही मैं देव के चरणो मे अर्पण कर रहा हू ।

शकर उठो मन्मथ, धनुप पर वाण चढाओ और मुझे अर्पित करो ।

सती जरा मुझे तो दिखाओ ये बाण। (**मन्मथ बाण देता है और वह उसकी नोकें अपने हाथ में चुभोकर देखती है ।**) क्या इन्ही को तुम कोमल फूल कह रहे हो ? देखो, सहज लग जाने से भी वे मेरे हाथो मे चुभ गए ।

रति फूल जितना अधिक कोमल और दीखने मे जितना अधिक सुदर होता है, उसके डठल पर उतने ही अधिक कड़े काटे होते हैं । मामूली फूलो के डठलो मे काटो की तरह दीखनेवाली सिर्फ पत्तिया होती है । परतु फूल यदि कोमल और अन्त्यत मनोहर हो तो उसमे तीव्र काटे होते ही हैं ।

सती यदि ये काटे देव के हृदय मे चुभ जाय तो इससे क्या तुम्हे सतोप होगा, मन्मथ ?

मन्मथ इस पर तो मैंने कभी ध्यान ही नही दिया था ।

शकर कोई हर्ज नही । दे दो ये वाण मन्मथ को । हा मन्मथ, चढाओ ये वाण अपने धनुष पर ।

सती नहीं । मै ऐसा कभी न करने दूगी । अगर आपकी इच्छा ही है, तो आप उन्हे अपने हृदय से स्पर्श करके मन्मथ को लौटा दीजिए । वेचारे का सर्वस्व क्यो छीन लिया जाय ?

शकर ठीक है । जैसी तुम्हारी इच्छा । (**वाण हाथ में लेता है । अपने हृदय से उन्हें स्पर्श करता है और मन्मथ को लौटा देता है ।**)

मन्मथ अहाहा ! देव, आपकी यह कितनी उदारता ! मुझ जैसे अपरिचित को भी आपने कितना सम्मान दिया !

शंकर (स्वगत) यह क्या ? वाणो का स्पर्श होते ही यह क्या हो गया ? क्या मेरी नित्य की आनद वृत्ति विलुप्त हो गई ? नही, पर उसका कोई रूपान्तर हुआ है, इसमे सदेह नही । आनद वही है, परतु उसकी लहरे अवश्य अपरिचित लगती है ।

सती देव, आप स्तब्ध क्यो हो गए ? वाणो के अग्रभागो का स्पर्श होने से आपके हृदय को कोई दु ख तो नहीं हुआ ?

शंकर दु ख तो नही हुआ । पर कुछ हुआ है अवश्य । सती, तुम मुझे कितनी रमणीय दीख रही हो ? तुम्हारे नेत्रो मे यह असाधारण ज्योति एकाएक कहा से आ गई ? मुझे लगने लगा है कि तुम्हारी आखो मे आखे डाले हुए ही मै बैठा रहूं । आओ-आओ, सती । बिल्कुल मेरे पास आ जाओ । हम दोनो के बीच कोई व्यवधान न रहना चाहिए । आओ, बिल्कुल नजदीक आ जाओ । **(उसे अपने पास खींच लेता है ।)**

मन्मथ देव, यह क्या हो रहा है ? यह कौन है ? आप कौन है ? कुछ क्षण पहले आपको इसके अस्तित्व का भी पता नही था और अब उसका निकट सहवास आपको इतना आवश्यक मालूम होने लगा ? यह क्या है ?

शकर कोई कुछ भी कहता रहे, पर सती के बिना मै एक क्षण के लिए भी न रहूगा ।

रति देव, आप जैसे महान पुरुष को ऐसा नहीं करना चाहिए । यदि आपको स्त्री की पवित्रता की कल्पना होती तो सती के बारे मे आप ऐसे उद्गार न निकालते । सती, कम-से-कम तुम्हे तो कुछ लाज-शर्म होनी चाहिए । उन्होने कहा कि मेरे पास आ जाओ, और तुम एकदम उनके पास चल दी ? कुछ लज्जा भी है तुम्हे ?

शकर . लज्जा की क्या आवश्यकता है ?

मन्मथ ' देव, यह मै बताता हू ।

रति सती, पर तुम पहले वहा से उठकर यहा आकर खडी हो जाओ ।

सती क्यो ? मुझे किसी की लज्जा नही और न मै इतनी भीरु

और कायर हूं, जो किसी की मर्यादा का पालन करू ! मुझे जो अच्छा लगेगा, वैसा मैं करूगी । मै नही समझती कि तुममे इतनी योग्यता हे कि तुम्हारी शिक्षा को मानू । मैं इसी तरह यही बैठी रहूंगी ।

मन्मथ   पर सती, तुम्हारे लिए वह पर-पुरुष जो है ।

शकर   नही-नही, इनके बारे मे मुझे परायापन बिल्कुल नही लगता । आजतक, मुझे सूना-सूना लगता था । वह अपूर्णता आज पूर्ण हो गई । मेरे मन पर क्या प्रभाव पडा, यह मै यद्यपि ठीक-से नही कह सकता, परतु इनके शरीर के दर्शन से मेरे नित्य के आनद को कोई मनोहर स्वरूप प्राप्त हो गया हे, इसमे सदेह नही ।

रति   आपका आनद आपके पास है । सती को उससे क्या मतलब ? उसे अपना आचरण सभालना हे । देव, किसी कुमारी का परपुरुष के इतने पास बैठना भी शिष्ट-सम्मत नही ।

सती   रति, तुम कहती हो, वह सब सच हे । परतु देव को छोडकर मुझसे रहा ही नही जाता । फिर इसके लिए मै क्या करू ? जन की लाज करने के लिए यहा कोई जन ही नही हे, फिर यहा मै अपने मन के अनुसार वर्ताव क्यो न करू ?

रति   अजी, पर हम लोग जो ह—हम कोन है ? क्या हमारे सामने भी तुम पराये पुरुष के गले मे बाह डालकर इस तरह बैठोगी ?

शकर   ऐसा करना यदि अनुचित है तो तुम दोनो इतनी घनिष्टता से क्यो वर्ताव करते हो ?

मन्मथ   देव, यह मेरी पत्नी है और मैं इसका पति हू ।

शकर   तुम जिस तरह तुम इसके स्वामी हो, वैसा इससे मेरा सबध नही, यह सच हे । सती, अभीतक के मेरे वर्ताव से तुमने देख ही लिया है कि मै कितना मूढ हू । मन्मथ रति से अधिक होशियार दीखता हे, इसीलिए वह उसका पति हुआ । मै हू पागल । ससार के आचार से अपरिचित हू । जबतक मुझे यह न लगा था कि बाहर जो ससार हे, उसमे जाकर मिलू, तबतक मेरी मूढता

मुझे आनददायी हो गई थी। पर आज मेरे हृदय मे नई स्फूर्ति का उद्रेक हुआ है। इसलिए आजतक जिस मूढता पर मुझे गर्व था, वही मुझे अब दुस्सह लग रही है। ससार मे किस तरह वर्ताव करना चाहिए, यह मै नही जानता। तुम्हारे सेवको की दृष्टि मे भी मै तुम्हारे लिए अयोग्य सिद्ध हो रहा हू। सती, बताओ, अब मै क्या करू ?

मन्मथ सचमुच देव, आप बडे अभागे है। मेरी पत्नी को देखिये—यदि मैं इसका हाथ पकड लू तो कोई भी मुझे नही रोक सकता। मैं इसे यदि खीचकर इस तरह अपने हृदय से लगा लू तो मुझे किसी से शर्माने की जरूरत नही। और देव, क्या बताऊं ? आपके सामने मैं अतिक्रमण नही कर सकता, नही तो इस समय मै इसका चुबन भी ले लेता।

सती मन्मथ, कुछ लाज-सकोच भी है तुम्हे ?

मन्मथ सती, मेरी बाते तुम्हारे लिए नही। तुम चाहो तो कानो मे अगुलिया डालकर आखे बद कर लो। सच कहता हूं, यदि तुम यहा न होती तो देव के सामने भी मैं इसका चुबन ले लेता।

शकर चुम्बन ? अहाहा ! चुम्बन ! चुम्बन मैं जानता हूं। मेरा नदी मुझे अपनी पीठ पर बिठालकर ऊचे-ऊचे शिखरो पर निर्भयता से स्वच्छद घूमता है। किसी भी कठिनाई की परवा न कर जिस समय वह हिमालय की तलहटी से कैलास के उच्च-तम शिखर पर मुझे पहुचा देता है और मेरे नीचे उतरते ही जब कान खडे करके, तिरछी गरदन से मेरी ओर देखता हुआ चारो खुरो पर कूदने लगता है, तब प्रेम के उबाल से फूलकर मैं उसे अपने पास खीच लेता हूं और बडी आतुरता मे उसके गाल का चुम्बन लेता हू।

मन्मथ छि ! यह कोई वह चुम्बन नहीं।

शंकर शृगी और नदी कभी-कभी लड पडते है...

शृंगी (**आगे बढकर**) कभी-कभी क्यो ? हम रोज ही लडते है। उसके दो सींग हैं, इसका उसे बडा गर्व है।

शकर अत मे बहुधा भृगी ही हार जाता है ।

भृगी मै हारूगा क्यो नही ? मेरे एक ही सीग जो है ।

शंकर हार जाने से उसे दु ख होता है । दु खावेश मे वह रो पडता है, रूठकर एक तरफ बैठ जाता है । उसकी सिसकिया नही रुकती, तब मै उसे अपने पास खीच लेता हू और समझाने लगता हू । फिर भी वह शान्त नही होता । तब अत मे उसे अपनी छाती से लगाकर प्रेम से उसके कपोल प्रदेश का चुम्बन लेता हू । तभी वह शान्त होता है ।

भृगी और तभी नदी भी गर्दन झुकाये चुपचाप चल देता है ।

मन्मथ छि ! यह भी वह नही—यह निरा वात्सल्य है !

शकर कभी-कभी पर्वत के उच्च शिखर पर मैं बैठा होता हू । ऊपर नभमडल मे असख्य मेघ-मालाए समूचे पर्वत पर काली छाया फैलाती हुई इतस्तत भ्रमण करती रहती है । उनकी आपस मे चल रही क्रीडा को देखकर, मुझसे भी हँसी नही रोकी जाती । इसी समय उसमे का एक छोटा-सा बादल धीरे-से नीचे उतर-कर मेरी जटा को स्पर्श करके भागने लगता है । तब अपने इस त्रिशूल से मै उसे नीचे खीचता हूं । वह गिडगिडाता है—रोने लगता है । यह देखकर मेरा हृदय द्रवीभूत हो जाता है । मै उसे नीचे खीच लेता हू और उसे अपना एक चुम्बन दे देता हू । तब वह हंसते-हँसते ऊचा उडकर दृष्टि से ओझल हो जाता है ।

सन्मथ छि ! यह भी वह नही—यह केवल भाव-प्रधानता है !

शकर किसी दिन पक्षियो के श्रुतिमनोहर कलरव मे मैं चौककर जाग पडता हू । उस समय पवन अर्द्ध-निद्रावस्था मे झपकिया लेता हुआ इधर-उधर फुदकता रहता है । उसे पकडकर पूर्णरूप से जगा देने के लिए मैं उसके पीछे दौड पडता हू । यह जानकर भी कि मैं पीछा कर रहा हू, झोके खाता हुआ, किन्तु बडे वेग से वह मानसरोवर के किनारे जाकर रुक जाता है और अरुण के उदय होते ही सो जाता है । वही ठिठक कर वह कैसे सोता

है, यह मैं ध्यानपूर्वक देखने लगता हूं। सरोवर के मध्य भाग मे एक ही कमल-कलिका उस पवन की वह अर्धोन्मेषावस्था देखने के लिए धीरे-से उपर उठती है। सोते समय वह क्रमश इने-गिने निश्वास छोडने लगता है। वैसे-वैसे वह कलिका आनद से झूमने लगती है। इसी समय सूर्योदय होता है। त्योही वह कलिका अपनी मुग्धावस्था छोडकर, चौंककर, गर्दन उठाकर, उदित हो रहे सूर्य को प्रणाम करती है और मै भी जल का व्यवधान भूलकर, सरोवर के मध्यभाग की ओर लपककर, उस कलिका को चूम लेता हू।

सती अहाहा! धन्य है वह कलिका!

मन्मथ देव, फिर भी मै जो कहता हू, वह यह नही। आपके मन मे भिन्न-भिन्न भावनाए भिन्न-भिन्न समय पर उत्पन्न हुई थी और आपने ये चुम्बन लिये। जब वे सब भावनाए एकत्र होकर एक ही चुम्बन लेने के लिए कारणीभूत होगी ओर किसी रमणी के कमल-कलिका जैसे स्निग्ध होठो मे जिस समय आपके होठ क्षण-भर के लिए स्पर्श करेगे

शकर होठो का चुम्बन? सच—सती! नही—मन्मथ, तुमने क्या कहा? होठो का चुम्बन? सती, यह कल्पना अत्यत हृदयगम है।

मन्मथ देव, यह कल्पना नही, यह मूर्तिमान सत्य है (**रति को लक्ष्य करके**) इन होठो का चुम्बन लेने का मुझे पूर्ण अधिकार है। देव, सचमुच आप बडे अभागे है।

शकर सचमुच मै अभागा हू। सती, रति जिस तरह इस मन्मथ की है, उसी तरह तुम मेरी हो जाओ। हो जाओगी न? पर नही, यह उसका पति है, उसका स्वामी है। उसका स्वामी होने की इसमे योग्यता होगी, परन्तु तुम्हारा स्वामी होने के लिए मै बिल्कुल अपात्र हू। मेरा इतने समय का अस्तित्व व्यर्थ हुआ। अहा-हा! होठो का चुबन!

रति अरी पगली सती, कम-से-कम अब भी उनसे दूर हो जा। क्या

तुझे याद नही कि तू कुमारी है ? **(सती चौककर, शकर से अलग हो जाती है)** । अब कैसी दूर हो गई ! देखिये देव, इसी से अब आप समझ ले ।

शकर   क्या समझू ? सती, तुम क्यो चौक पडी ? एकदम इस तरह दूर क्यो चल दी ? मुझसे कोई भूल तो नही हो गई ?

रति   क्योजी, अब क्यो चुप हो ? बोलती क्यो नही ? देखा देव, ऐसी बात है यह । प्रेम के साम्राज्य की भाषा हमेशा उलटी होती है ।

शकर   सती, तुम्हारा पति होने के लिए मै बिल्कुल अपात्र हू । कही इसीलिए तो तुम मुझसे दूर नही हो गई ? इससे पहले, सच कहता हू, मेरे मन मे कभी यह विचार ही नही आया था कि किसी का पति होकर मै शान दिखाऊ । अब भी मुझे ऐसा नही लगता । पर तुम्हारे बिना मै नही रह सकता । जबतक तुम मुझसे मिली नही थी, तबतक कभी भी मुझे तुम्हारा अभाव नही मालूम हुआ । परतु अब तुमसे भेट हो जाने पर तुम्हारा वियोग मुझे दुस्सह हो जायगा । सती, पति के नाते नही, पर कम-से-कम एक दास के नाते क्या इस दीन को तुम स्वीकार कर लोगी ?

सती   यह क्या कहते है आप ? आपके दास की दासी होने की भी योग्यता मुझमे नही ।

मन्मय   **(जल्दी-जल्दी)** हो चुका । सबकुछ जम गया । अब जहा कन्या-दान हुआ कि काम हो जायगा ।

शकर   कन्या-दान ? यह क्या मामला है ?

मन्मय   देव, सती दक्ष की कन्या है । जबतक यह अविवाहित है, तबतक इसका अपने आप पर कोई अधिकार नही । यह तभी आपकी हो सकेगी, जब इसका पिता आपको इसे दान मे दे । कम-से-कम उस समय तक आपको इसका वियोग सहन करना होगा ।

शकर   कन्या-दान क्या यही नही हो सकेगा ? इसके पिता को यहा आने मे क्या आपत्ति है ? इसे घर जाने की क्या आवश्यकता ?

मन्मथ वर को वधू के घर जाकर कन्या के पिता से उसकी याचना करनी पडती है ।

भृगी (स्वगत) ऐसा ? गनीमत है जो मैं कन्या नही हुआ, नही तो पशु से भी अधिक पराधीन हो जाता ।

शकर ठीक है । चलो, हम सब साथ ही दक्ष के पास चले ।

मन्मथ अह । यह काम बडा कठिन है । दक्षप्रजापति आपसे अत्यन्त घृणा करते है ।

शकर मैंने कभी किसी का द्वेष नही किया । उन्हे मुझसे घृणा क्यो करनी चाहिए ?

मन्मथ यह मै क्या बताऊ ? आप स्वय आइये वहा । वही आप सब समझ जायगे । हमे अब यहा से लौट जाना चाहिए । अगर देर होगी, तो दक्षप्रजापति हम पर रोष करेगे । चलो सती तुमने हिमालय पूरी तरह देख लिया है न ?

रति हिमालय देखा हो या न देखा हो, हमे अब जाना ही चाहिए ।

शकर जाना ही चाहिए । सती, बोलो, क्या तुम्हे भी जाना ही होगा ?

सती हा, जाना तो होगा ही । पर देव, आपके चरणो की दासी के लिए क्या आप दक्षप्रजापति के द्वार पर पधारेगे ? आपसे द्वेष रखनेवाले मेरे पिताजी यदि आपका अपमान कर दे तो क्या आप उसे सहन कर लेगे ? देव, मुझे लौटकर जाना तो होगा ही । परतु जबतक आप मेरे घर आकर मुझे पुन यहा नही ले आते, तबतक यह सती मृतप्राय है, ऐसा समझिये । आपका दक्ष के घर अपमान ही मेरा जीवन है । (अभिवादन करती है) चलो मन्मथ, अब पीछे मुडकर भी मत देखो । (वे जाते है) ।

शकर अरे भृगी, भृगी, जाओ-जाओ, उन्हे मार्ग दिखाओ । (जाते है) (स्वगत) वह चली गई ! मुझे आज यह क्या हो गया है ? मेरा आनन्द कहा गया ? आजतक मेरा आनन्द मेरे हृदय मे था । वह कैसा था, मै जानता न था । आज उस आनद की मूर्त्ति मैने प्रत्यक्ष रूप मे देखी । अब उस अमूर्त्त आनद को लेकर मै क्या करूगा ? जबतक आनद अमूर्त्त था, तबतक अनजाने, मै उसमे खो

जाया करता था । उस समय 'मे' आनंद था । अब 'मेरा' आनद हुआ । मै और वह । जिसे द्वैत कहते है, क्या वह यही है ? क्या यह द्वैत का ही अवतार हुआ ? तो कहना होगा कि द्वैत मे भी आनद होता है । होता है अवश्य । अद्वैत के आनद की अपेक्षा यह आनद अधिक मूर्त्त हे । मै इस आनद की मूर्त्ति को ही चाहता हू । वही मेरा आनद हे । वही मेरा जीवन है । वही मेरा ऐश्वर्य है । परतु वह चल गई । मेरा आनद मुझसे छीनकर भाग गई और मै रक से भी रक हो गया । मेरा सर्वस्व वह चुरा ले गई । उसे पुन प्राप्त करने के लिए मुझे अब याचक बनना पडेगा । ठीक है । भिखारी को भीख मागने मे क्या आपत्ति है ? मै आजतक अन्न के लिए भीख मागता था, अब प्रेम के लिए भीख मागूगा । दक्षप्रजापति मेरा अपमान करेगा ? करने दो । भिखारी को मान काहे का ? मान और अपमान की परवा न कर यजमान के घर निर्लज्जता मे अडकर बैठे बिना भिखारी को भीख नही मिलती । बस, मैं तैयार हू । यह नर-कपाल हाथ मे ले लिया । यह त्रिशूल उठा लिया और यह महादेव अपने वैरी के द्वार पर भीख मागने के लिए, यह देखो, चल पडा । नगाधिराज हिमालय, तुम्हारा अधिराज आज तुम्हारी सीमा छोडकर जा रहा है । तुम्हारा वैभव भूलकर अपनी दीनता का प्रदर्शन करने के लिए वह दक्षपति के द्वार पर प्रेम की याचना के लिए 'भिक्षादेहि' की पुकार लगायगा । उसे आशीर्वाद दो और शक्तिमान होकर वापस आनेवाले अपने इस अधिराज का स्वागत करने के लिए तैयार रहो ।

(परदा गिरता है ।)

द्वितीय अंक

दृश्य एक

(प्रसूती और मायावती)

माया रानी, सती की योग्यता इतनी बडी है कि महादेव के अतिरिक्त उसके लिए अनुरूप वर दूसरा कोई नही । महादेव के प्रति दक्षप्रजापति के मन मे जो द्वेष है वह केवल भ्रम है । द्वेप किसी भी प्रकार का हो, परतु अपने निजी द्वेप की अपेक्षा यह देखना कि अपनी कन्या का अधिक कल्याण कहा है, उनका कर्तव्य है और यदि वह अपने कर्तव्य मे भूलते हैं तो तुम्हे उन्हे सावधान कर देना चाहिए ।

प्रसूती मै प्रयत्न करूगी । पर मेरी सुनेगा कौन ? उनका स्वभाव आप जानती ही है । वह एक बार जो निश्चय कर लेते है, वह पत्थर की लकीर हो जाता है । कोई उन्हे कितना भी समझाये, पर वह उसे नही छोडते । ब्रह्मदेव ने भी उनसे यही कहा था । परतु उसका भी उन पर कोई प्रभाव न पडा । कम-से-कम अपने पिता की आज्ञा तो उन्हे माननी चाहिए थी न ? पर नही मानी, उल्टे द्वेप ही अधिक बढा । जहा स्वय उनके पिता की यह स्थिति हुई, वहा मै बेचारी किस खेत की मूली हू ?

माया मै सोचती हू कि स्वयवर रचा जाय । सब देव निमत्रित किए जायं । सती जिसे पसद करे, उसे वरमाला पहिना दे । यह योजना ठीक रहेगी ।

प्रसूती यह हो सकता है । पर उस समय सती महादेव के गले मे ही माला पहिनायगी, यह विश्वास कैसे हो ?

माया इसकी तुम कोई चिता न करो । तुम किसी तरह स्वयवर कराओ । फिर तुम्हे कुछ नही करना । आगे सब मै देख लूगी ।

प्रसूती ठीक है । करती हू प्रयत्न । आगे उसका भाग्य है ।

माया सती हिमालय गई है । वहा शकर मे उसकी भेट होगी ही । उस भेट का कुछ-न-कुछ परिणाम हुए विना न रहेगा । रानी, तुमने हिमालय नही देखा, इसलिए तुम्हे उसके वैभव की कोई कल्पना ही नही हो मकती । हिमालय को उत्पन्न करके विधाता ने अपनी बुद्धि की परमावधि दिखा दी है । यही नही, वल्कि कभी-कभी मुझे ऐसा लगता हे कि विधाता के द्वारा सारी सृष्टि के निर्मित हो जाने के वाद, प्रसन्न होकर, भगवान ने ही यह हिमालय रूपी मुकुट इस सृष्टि के मस्तक पर पहना दिया है । रानी, हिमालय का वर्णन कैसे करूं ! हिमालय का यथातथ्य वर्णन करनेवाला कवि आजतक पैदा नही हुआ और न आगे कभी होगा ।

प्रसूती योगिनी, आपके मुह से हिमालय का वर्णन सुनकर, उसे देखने के लिए मेरा मन तो उत्सुक हो ही उठता है, परतु ऐसा ही वैभव मेरी सती को मिले, यह भावना भी मेरे मन मे पूर्ण रूप से दृढ होने लगती है ।

माया रानी, हिमालय का वैभव सुवर्ण और मोतियो का नही, हिमालय का वैभव कुबेर की सपत्ति नही, हिमालय का वैभव पृथ्वीपति के सिहासन का भी नही । हिमायल रको का ऐश्वर्य है और पृथ्वीपति को भी जिसके आगे गर्दन झुका देनी पडेगी, ऐसा महान रक उस हिमालय का राजा है ।

प्रसूती वेटी के भाग्य मे क्या लिखा है, सो भगवान जाने । मैं लाख चाहू कि अपनी वेटी रक को दे दू । पर उनका मन कैसे वदलू ? आपने अभी स्वयवर का जो सुझाव दिया है, उसके वारे मे उनसे वाते करूगी । यह सुझाव यदि उन्हे पसद आ गया तो आपकी कृपा से मव ठीक हो जायगा ।

माया रानी, प्रजापति के यहा आने का समय हो गया है । मुझे भी अव महादेव का पूजन करना है । इसलिए तुमसे विदा लेती हू । तुम कोई चिंता न करो । ईश्वर तुम्हारी साध पूरी करेगा ।

(जाती है ।)

प्रसूती (स्वगत) मन भी कैसा पागल होता है ! सब लोग ऐश्वर्य चाहते है, पर मै ऐसी पगली कि अपनी बेटी रक को देना चाहती हूं । मै स्वय ऐश्वर्य के शिखर पर आरूढ हू । मै यद्यपि रक की बेटी नही, फिर भी मुझे यह ऐश्वर्य अच्छा नही लगता । ऐश्वर्य के कारण हमे अनेक बधनो मे अपने आपको जकड लेना पडता है । अन्य ऋषियो ने अपनी बेटिया चाहे जिस ऋषि को दे दी और हमे यह खोजना पड रहा है कि हमारी बराबरी का वैभवशाली कौन है, जिसे हम अपनी बेटी दे ! मेरी बहन देवहूती कर्दम मुनि की पर्णकुटी मे बडे सुख और सतोष मे जीवन बिता रही है । इसी-लिए मुझे लगता है कि मेरी बेटी भी किसी ऋषि या मुनि के घर जाय तो अच्छा ! आखिर ऐश्वर्य मे भी क्या सुख है ? जो है, वह कभी काफी नही मालूम होता । अगर अधिक मिले, तो वह भी अधूरा जान पडता है । कितना भी मिले, पर ऐसा कभी लगता ही नही कि हमे पूरा मिल गया है । असतोष बढाने-वाला ऐसा ऐश्वर्य प्राप्त होने की अपेक्षा सुख और सतोष की दरिद्रता क्या बुरी ? अस्तु, जो भी हो—कम-से-कम स्वयवर की इस योजना से ही काम हो जाय तो समझूगी सब पा गई ।

(दक्ष आता है ।)

दक्ष क्या सोच रही हो । कही हमे किसी सकट मे लाने का तो इरादा नही ? क्योकि नित्य का क्रम ही यह है कि हम कोई योजना बनाए और देवी उसे ठप्प कर दे ।

प्रसूती हँसी की भी कोई सीमा होती है । अकारण ही किसी पर झूठा आरोप लगा देने मे आपको क्या मिल जाता है, भगवान जाने ! मै बेचारी क्या सोचूगी ? हम स्त्रिया केवल एक ही बात सोचा करती है—पति का कल्याण कैसे हो !

दक्ष और प्रजापति का कल्याण किसे सोचना चाहिए ?

प्रसूती प्रजा को । मुझे उससे क्या करना है ?

दक्ष ऐसा कैसे कह सकती हो ? तुम जिस तरह मेरी पत्नी हो, उसी

तरह मेरी प्रजा भी हो ।

प्रसूती नहीं, मैं आपकी प्रजा नहीं । प्रजा मेरी है । मैं प्रजापति की अर्धांगिनी हूं । एक अर्ध में प्रजा का भार वहन करती हूं और दूसरे उत्तभाग में उस भार को वहन करनेवाले अर्ध की चिंता करती हूं ।

दक्ष कुल मिलाकर तुमने मुझे बोझा ढोनेवाला बना ही दिया । अब आगे कौनसी पदवी देने का विचार है ?

प्रसूती पदवी देने का अधिकार मुझे नहीं । वह अधिकार पितामह को है ।

दक्ष हां, यह तो सच है । सती के जन्म-दिन पर उन्होंने मुझे प्रजापति के स्थान पर आरूढ़ किया । तब से अपने पराक्रम के बल पर मैं सारे त्रिभुवन पर अपना अधिकार जमाये हूं । इस स्थान पर मुझे नियुक्त करके विधाता ने अपनी बुद्धिमत्ता की पराकाष्ठा दिखा दी है ।

प्रसूती तो कहना चाहिए कि यह पद आपको सती के भाग्य से ही प्राप्त हुआ है ।

दक्ष इसमें सती का क्या भाग्य ? पर हां, यह एक संयोग अवश्य है और इसीलिए सती से मुझे अधिक प्रेम है । संतान-प्रेम की सृष्टि में यह एक नया ही प्रादुर्भाव हुआ है । इस कारण अन्य किसी भी प्रकार के प्रेम की अपेक्षा उसकी महिमा आज अधिक लग रही है । इसी दृष्टि से यदि तुम्हें यह लगे कि सती का जन्म-काल मेरे ऐश्वर्य के लिए एक प्रकार से कारणीभूत हुआ तो कोई आश्चर्य नहीं ।

प्रसूती खैर, कुछ भी हो, सती के प्रति आपका प्रेम अत्यंत उत्कट है, इसमें संदेह नहीं । पर अब समय आ गया है कि यह प्रेम एक तरफ रखकर, विधाता के नियमानुसार किसी अनुरूप वर को हमें उसे दान कर देना चाहिए ।

दक्ष 'प्रेम को एक तरफ रखकर' क्यों कहती हो ? उस प्रेम के कारण ही मैं उसके लिए अनुरूप वर खोज रहा हूं । उस प्रेम के कारण

ही समूचे त्रिभुवन मे मुझे उसके लिए अनुरूप एक भी वर नही मिल रहा है । देव, यक्ष, किन्नर, लोकपाल—सबको देख चुका, पर प्रत्येक मे एक-न-एक दोष है ही । विष्णु ही एक ऐसा है, जो सती के लिए कुछ उपयुक्त-सा दीख रहा है, क्योकि लक्ष्मी को उसने अपनी नित्य की सहचरी बना लिया है । पर जिस कारण से वह अनुरूप सिद्ध होता है, उसी कारण से वह अयोग्य भी सिद्ध होता है । लक्ष्मी विष्णु की पत्नी है, इसीका मुझे बडा दु ख होता है । अगर सती उसके पास जायगी तो वहा उसकी एक सौत भी रहेगी और उसे सौतेले भाव मे रखना मुझे पसद नही ।

प्रसूती तो इसके लिए यदि स्वयवर की योजना की जाय तो क्या बुरा है ?

दक्ष छि ! छि ! इतनी महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी अल्हड लडकी के बाह्य स्वरूप की परीक्षा के भरोसे छोड देने का परिणाम कभी हितकारी न होगा । स्वयवर मे अनेक घमडी स्वाग बना-बनाकर उपस्थित होगे । मडप की सिर्फ शोभा बढाने के लिए आनेवाले किसी ऐसे एकाध घमडी के गले मे यदि उसने माला डाल दी, तो उसके सारे जीवन का नाश हो जायगा । विष्णु जैसे जगत के पालक के गले मे माला डालने मे लक्ष्मी ने अपनी जिस बुद्धि का परिचय दिया, वह बुद्धि सती मे होगी, ऐसा मुझे नही लगता ।

प्रसूती क्या हमारी सती को आप बिल्कुल ही मूर्ख समझ रहे है ?

दक्ष ऐसा मैने कहा कहा ? वह मूर्ख नही, यह सच है । परतु लक्ष्मी की बुद्धि उसमे नही । आवश्यकताओ से अधिक लाड करके तुमने उसे बिगाड दिया है । मायावती के सहवास ने उसके मस्तिष्क मे अनाप-शनाप विचार पैदा कर दिए है । वास्तविकता की अपेक्षा कल्पना की उडान की ओर ही उसकी रुचि अधिक बढने लगी है । ऐसी स्थिति मे यदि हम उसे स्वयवर के मोह-जाल मे उलझा दे तो उसके सुख की हानि तो होगी ही,

पर कदाचित हमारे ऐश्वर्य को भी कालिमा लग जाय ।

प्रसूती मैने उसके ऐसे कौनसे लाड किए है, जिनके कारण वह बिगड गई है ! और आखिर उसमे वह बिगाड है कहा ?

दक्ष पहले की बाते छोड दो । परतु हाल ही मे तुमने उसे हिमालय पर क्यो जाने दिया ?

प्रसूती वह राजकन्या है । क्या राजकन्या को भी दर्शनीय स्थान नही देखने चाहिए ? ऐसे अलौकिक स्थानो को देखना केवल दो प्रकार के मनुष्यो के भाग्य मे ही होता है । एक राव, या दूसरा रक । दूसरे प्रकार के मनुष्यो के भाग्य मे यह शायद ही होता है । दैवयोग मे हम रक नही है । फिर हमे जो ऐश्वर्य प्राप्त है, उसका सदुपयोग क्यो न कर लेना चाहिए ?

दक्ष ऐश्वर्य का सदुपयोग करने के अन्य कई मार्ग है, जो इसकी अपेक्षा अधिक अच्छे है । रको की दरिद्रता देखने के लिए ऐश्वर्य का अपव्यय करने मे क्या लाभ ?

प्रसूती जिन रको को अपनी दरिद्रता ही ऐश्वर्य लगती है, वे हमारा वैभव कब और कैसे देखेगे ? उन्हे यह कैसे मालूम हो कि सच्चा ऐश्वर्य हमारा ऐश्वर्य है—उनकी दरिद्रता नही । कम-से-कम अपने ऐश्वर्य की झाकी दिखाने के लिए यदि हम कभी-कभी दरिद्रो को अपना दर्शन दे तो क्या बुरा है ?

दक्ष एक दृष्टि मे तुम्हारे ये विचार ठीक है । पर इन भिखारियो को यदि हमारे ऐश्वर्य का पता लग गया, दरिद्रता के सतोष को छोडकर वे भी ऐश्वर्य के लिए लालायित हो उठे तो हमारी सुरक्षा को धोखा हो जायगा । किसी भी दृष्टि से देखे, फिर भी अच्छा यही है कि राव और रक हमेशा दूर-दूर ही रहे । रक यदि राव के नजदीक आये भी तो सेवक के रूप मे ही आ सकते है । अब सती की बात ही लो । हिमालय के दर्शन से यदि कल उसे उसी जगह रहने की रुचि पैदा हो गई तो तुम क्या करोगी ?

प्रसूती मैं क्या करती, इसकी सिर्फ कल्पना करने की अपेक्षा

लीजिये, सती ही यहा आ रही है, वही इसका निराकरण कर देगी। (**सती आती है।**) आओ, बेटी, आओ। (**उसे अपने समीप खींच लेती है।**) इस प्रवास म तुम्हे श्रम तो नही हुआ? (**सती दोनो को प्रणाम करती है।**)

सती बिल्कुल नही, मा। ऐसा स्थान देखने के लिए यदि कितने ही गुना अधिक श्रम होता, फिर भी मुझे उनकी परवा न होती।

दक्ष बेटी, तुम पगली हो। बर्फ से ढके हुए बडे-बडे पत्थरो को व्यर्थ का महत्त्व देना, मेरी बेटी को शोभा नही देता।

सती पिताजी, क्या आपने हिमालय देखा है? कैलास देखा है?

दक्ष हा, देखा है। और भी बहुतमे बडे-बडे पत्थर देखे है।

सती महादेव देखे है?

दक्ष कौनसा महादेव?

सती कैलासपति महादेव।

दक्ष वही मरघट का भूत न? मै उसका मुह भी देखना नही चाहता।

सती उनका मुह यदि आप देखते तो ऐसा कभी न कहते .

दक्ष और चूकि तू इतनी उद्दडता से बाते कर रही है, इसलिए यह निश्चित है कि तूने उस भूत का मुह अवश्य देखा है।

सती मैने केवल मुखावलोकन ही नही किया, बल्कि उनका जो थोडा-सा सहवास मुझे प्राप्त हुआ, उसके कारण मुझे अब उनके सिवा और कुछ सूझ ही नही रहा है।

दक्ष देखो, देवी देखो—मै जो कह रहा था, उसका यह प्रत्यक्ष प्रत्यतर देख लो। इसीलिए इन भिखारियो का अधिकार हमे त्याज्य लगता है। भिखारी आखिर भिखारी ही होते है। परतु मात्र दर्शन से भी राजा को रक कर देते है, सो इसी तरह! भिखारी आखिर भीख मागेगे, पर दक्षप्रजापति के आश्रित होने मे हलकापन मानते है।

सती प्रत्येक रक यदि महादेव के समान हो तो वह मुझे प्राणो से भी अधिक प्रिय लगेगा।

दक्ष महादेव? यह बैताल महादेव कब हो गया? किसने इसे महा-

देव बना दिया ?

सती   जिन्होने आपको प्रजापति का पद प्रदान किया, उन्हींके वह महादेव हैं। और आपके प्रजापति होने से पहले से ही वह देवाधिदेव हो बैठे हैं।

दक्ष   सती, मेरे शत्रु की क्या चारणी बनकर आई है तू यहा ?

सती   आप ही उनसे वैर कर रहे हैं। वह कहते है कि वह किसी से भी द्वेष नही करते।

दक्ष   वह कहते है--वह कहते हे---वह जो कहते है, वह मेरे शब्दो की अपेक्षा तुझे अधिक महत्त्वपूर्ण लगता है ? क्या मेरी अपेक्षा उस भिखारी पर तेरा अधिक विश्वास है ? जिसने तेरा लालन-पालन किया, तुझे छोटे से बडा किया, तेरी सारी इच्छाए पूरी की, उसकी अपेक्षा, एक क्षण के लिए जिसका तुझे सहवास हुआ, वह पागल गिद्ध, क्या तुझे अधिक आदरणीय हो गया ?

प्रसूती   यह आप क्या ऊटपटाग कह रहे हैं ? आखिर लडकी है। सहज उसने कुछ कह दिया तो इतने क्रोध की क्या आवश्यकता ?

दक्ष   क्रोध क्यो न आये ? मेरी लडकी ही यदि भिखारी का पक्ष लेने लगे तो मुझे क्रोध क्यो नही आयगा ?

सती   भिखारियो का पक्ष लेना ही प्रजापति का धर्म है।

दक्ष   खबरदार ! अब एक शब्द भी न बोल ! प्रजापति का धर्म मुझे सिखानेवाली तू कौन होती है ?

सती   मानवधर्मशास्त्र के निर्माता स्वयभू मनु की कन्या की मै कन्या हू।

दक्ष   मनु की आज्ञाए मानवो के लिए हे। प्रजापति के लिए नहीं।

सती   तो क्या प्रजापति मानव नही हे ? फिर कौन हे ? देव या असुर ?

प्रसूती   सती--सती, यह क्या बक रही हे ? कुछ तो सोच !

दक्ष   यह सब हिमालय की हवा का प्रभाव है। मन्मथ कहा है ? क्या इसीलिए मैंने उसे इसके साथ भेजा था ? कहा हे मन्मथ ?
(मन्मथ प्रवेश करता है।)

मन्मथ   दास सेवा मे हाजिर ह।

दक्ष — क्यो रे चाडाल, हिमालय जाते समय मैने तुझसे क्या कहा था ? मैने तुझसे जता-जताकर कह दिया था न, कि वहा उस भूत से इसकी भेट न होने देना ।

मन्मथ — हा देव, पर मैं क्या करू ? भूत ही जो था ! जहा उसे हम नही चाहते थे, वही वह प्रकट हो गया ।

दक्ष — जब वह प्रकट हो गया था, तब उस स्थान को छोडकर, तुम इसे एकदम दूसरे स्थान पर क्यो नही ले गए ?

मन्मथ — भूत ही तो ठहरा ! उसके लिए स्थल और काल की कोई मर्यादा नही होती । यह तो भाग्य समझिये जो अभीतक वह यहा आकर नही पहुचा ।

दक्ष — अरेरे, यह कैसी मैंने नासमझी कर दी ? क्या करू ? अब क्या करू ? यह अब कैसे होश मे आयगी ?

सती — जो बेहोश हो गए हो, वह होश मे आवे । मै जितनी पहले होश मे थी, उतनी ही अब भी हू ।

दक्ष — (प्रसूती से) सुनो—सुनो, देख लो अपने फालतू लाड का असर । क्या इसीका स्वयवर रचने के लिए तुम मुझसे कह रही थी ?

सती — स्वयवर ? किसका ? मेरा ? सो किसलिए ?

प्रसूती — स्वयवर और किसलिए किया जाता है । पति का चुनाव करने के लिए ।

सती — अब मुझे पति का चुनाव करने की आवश्यकता ही नही रही ।

दक्ष — (स्वगत) हो गया । अत मे धोखा हो ही गया ।

सती — मा, आप मेरी कोई चिता न करे । अब केवल कन्यादान की तैयारी करके महादेव को निमत्रण भेज दीजिए । बस, इतना ही करना है आपको !

दक्ष — यह कुछ नही होगा । देवी, मुझे तुम्हारी स्वयवरवाली योजना ही पसद है । स्वयवर के लिए जो सारे देव और दिक्पाल एकत्र होगे, उन्हीमे से किसी एक को इसे अपना पति चुनना होगा ।

सती — ठीक है । मैं शकरजी को ही माला पहनाऊगी ।

दक्ष उस भूत को मैं स्वयवर का निमत्रण ही नही दूगा ।

सती तो एकत्र लोगो मे से मै किसी को भी माला नही पहनाऊगी । स्वयवर-मडप के मध्यभाग मे खडी होकर जोर से शकर को पुकारूगी और थोथे सम्मान की परवा न करनेवाले मेरे देव दौडकर आ जायगे और मै उनके गले मे माला पहना दूगी, जिसे वह सहर्ष स्वीकार करेगे ।

दक्ष सती, तुझे कोई कल्पना भी है कि यह तू क्या बक रही है ! देख, इस त्रिभुवन मे चारो ओर दृष्टि घुमाकर देख । मै अतुल ऐश्वर्यशाली हू । मेरे ऐश्वर्य से स्पर्धा करनेवाला इस सारे त्रिभुवन मे दूसरा कौन है ? यद्यपि यह सच है कि मेरी टक्कर का कोई नही, फिर भी ढूढने से कम-से-कम दोयम दर्जे का तो मुझे अवश्य मिल जायगा । मेघो के राजा इन्द्र को देख, अथवा जगत के पालन-कर्ता विष्णु को देख । इन दोनो मे से कम-से-कम कोई एक तेरे लिए अनुरूप है

मन्मथ देव, ये दोनो विवाहित है ।

दक्ष कोई हर्ज नही । दरिद्रता की यातनाओ से सौत लाख दर्जे अच्छी ।

सती ऐश्वर्य के लालच मे सौत जिसे अच्छी लगे, वह मजे मे उसको स्वीकार करे । परतु उस दुस्सह अपमान की अपेक्षा दरिद्रता का सम्मान ही मुझे अधिक पसद होगा ।

दक्ष अरी मूर्ख लडकी, दरिद्रता की यह बेढगी रुचि तुझमे आखिर पैदा कैसे हुई ?

सती रक का ऐश्वर्य देखने के कारण ।

दक्ष रक और ऐश्वर्य ! ये दो शब्द एक स्थान मे आये, यह बिल्कुल ही असभव है ।

सती मैंने उन्हे एक स्थान मे आये हुए प्रत्यक्ष देखा है ।

दक्ष क्या देखा है ? बाघ का चमडा, लोहे का त्रिशूल, मनुष्य की खोपडी का भिक्षा-पात्र, सर्पो के आभरण, चिता-भस्म के प्रावरण और जटा का मुकुट, ऐश्वर्य के यही चिह्न तूने देखे है न ?

सती (हँसकर) पिताजी, कुछ समय पहले आपने कहा था कि

आपने शकरजी को नही देखा। तो क्या वह झूठ कहा था ? आप झूठ बोले थे ?

प्रसूती बेटी, ऐसी बाते नही करनी चाहिए। तू व्यर्थ ही आग मे घी डाल रही है। क्या तू नही जानती कि अपनी कार्य-वस्तु पर दृष्टि रखकर बाते करने मे ही हित होता है ?

सती मा, मैं दक्षप्रजापति की कन्या हूं। कार्य-वस्तु के लिए मुह-देखी बाते करना मुझे शोभा नही देगा।

दक्ष तेरी इस मी ी बात पर मैं मोहित हो जाऊगा, ऐसा मत समझ लेना। सती, तुझसे पुन एक बार कहे देता हू, उस पागल से मैं कभी सबध नही रखूगा। भिखमगा होकर भी जो अधिकार की शान दिखाता है, ऐसे व्यक्ति को मै अपनी दृष्टि के सम्मुख भी नही लाना चाहता।

सती मैं विवाह उन्हीसे करूगी—दूसरे से नहीं।

दक्ष मेरा इतना अपमान ! मेरी ही लडकी मेरी विडम्बना करे ? सती, जिस दक्ष के मात्र इशारे पर इन्द्रादि देव नाचने लगते है, जिसके हाथ से हविर्भाव प्राप्त करने के लिए लक्ष्मीपति विष्णु भी उतावले होकर हाथ फैलाते है, जिसकी क्रूरता के स्मरण से ही दैत्य काप उठते हे। सब देवो को एक ओर हटाकर, नूतन जगत की सृष्टि का भार विधाता ने जिस पर सौपा है, उस दक्षप्रजापति की लडकी यदि भिखारी के गले मे वरमाला पहनाये तो क्या यह तुझे उचित प्रतीत होगा ? भिखारी का श्वसुर होने मे मेरे ऐश्वर्य और प्रतिष्ठा की जो क्षति होगी, क्या उसकी तुझे कोई परवा नही ? हिमालय के उच्च शिखर से लेकर विशाल समुद्र के छोर तक तेरे कारण—केवल तेरे दुराग्रह के कारण, भिखारियो का साम्राज्य फैलने लगे तो विधाता द्वारा अपने मानस-पुत्र को दिये गए अधिकार क्या धूल मे नही मिल जायगे ? सती, मेरी प्यारी सती, ऐसा हठ मत कर। कम-से-कम अपने पिता के कल्याण के लिए ही अपना यह दुराग्रह छोड दे।

सती पिताजी, मै यह कभी नहीं चाहूगी कि आपका अपमान हो।

आपके मन को चोट पहुचाने से मुझे कभी आनद न होगा। परतु मै यदि शकरजी से विवाह करती हू तो उसमे आपका अपमान कैसे होता है, यही मै नही समझ पा रही हू। आप जो 'ऐश्वर्य-ऐश्वर्य' कह रहे है, वह क्या है ? सुवर्ण, मोती, हीरे माणिक और बहुत हुआ तो अधिकार ! बस यही न ? सुवर्ण और हीरे-मोती आदि मुझे पसद नही। अधिकार की मुझे लालसा नही। आपके ऐश्वर्य मे सुख है, ऐसा मुझे नही लगता। मेरा मत गलत हो सकता है—शायद वह ठीक होते हुए भी आपके मत से मेल न खाता हो। पर क्या सिर्फ इतने-से मतभेद के कारण ही आप अपनी बेटी के जीवन का सत्यानाश कर देगे ? आप जिसे उचित समझते है, वह मुझे भी उचित समझना चाहिए, ऐसा सृष्टि का कोई नियम नही। जिस सृष्टि-नियम से आपका आविर्भाव हुआ, उस सृष्टि-नियम से मेरा जन्म नही हुआ। आप विधाता के मानस-पुत्र है। मै मनु की लडकी की लडकी हू, अर्थात मानवी हू। सृष्टि का क्रम बदलने के लिए आपका अवतार हुआ है और उस कार्य के लिए आपको मेरा उपयोग कर लेना चाहिए।

दक्ष मुझे क्या करना चाहिए, यह मुझे सिखाने का तुझे अधिकार नही। मुझे जो उचित जान पड़ेगा, वही मै करूगा और उसे करने मे मुझे यदि स्वय ब्रह्माजी भी रोके तो उनकी भी मै परवा न करूगा। इसीलिए तुझसे कहता हू कि कैलास के उस भूत के साथ मै कल्पात मे भी तेरा विवाह नही करूगा।

मन्मथ देव, अब यह क्रोध छोडिये। विवाह कोई आज ही तो होता नही। जिस समय वह मौका आयगा, उस समय देख लेगे।

दक्ष चुप रहो। जिस तरह अपनी लडकी का उपदेश सुनने को मै तैयार नही, उसी तरह सेवक के शब्दो को भी मै कोई महत्त्व नही देना चाहता।

प्रसूती (सती से) इस समय अवश्य तूने मर्यादा लाघकर बाते की है। पिता को उपदेश देने का तुझे कोई अधिकार नही।

सती — इस घर की मर्यादा लाघकर जाने के लिए मैं तैयार ही बैठी हू। लडकी हुई तो क्या हुआ ? पुरुषो के पास जिस तरह मन है, उसी तरह वह स्त्रियो के पास भी है। यह मन जिसने बनाया है, उसका भी उस पर कोई अधिकार नही। मन जहा एक बार चला गया, सो चला गया। वह अब वहा से कभी नही लौटेगा। उसके लिए यदि मुझे ये प्राण भी देने पडे तो परवा नही।

(परदे के भीतर से शकरजी जोर से चिल्लाते हैं—'भिक्षादेहि'।)

दक्ष — यह असमय भीख मागनेवाला कौन है ? जाओ मन्मथ, ऐसे साझ के समय मेरे प्रासाद के महा-द्वार पर पुकार लगानेवाला इतना उद्दड भिखारी आखिर कौन है, यह जाकर देखो तो !

मन्मथ — जो आज्ञा। **(जाता है।)**

दक्ष — जहा देखो वहा भिखारियो की ही भरमार है। न समय देखते और न असमय। हमेशा हाथ फैलाकर खडे हो जाते है। जैसे हमने इनके बाप का कर्जा लिया है।

प्रसूती — भगवान ने हमे दिया है। उन्हे नही दिया, इसलिए वे हमारे द्वार पर आते है। उनका तिरस्कार करने से कैसे चलेगा ! कुछ-न-कुछ सत्कार होना ही चाहिए।

दक्ष — ऐसो का सत्कार तो कोडो से ही करना चाहिए।

प्रसूती — पर मनु की आज्ञा क्या है ?

दक्ष — आगई अपने पिता का पक्ष लेकर। छोडो इन भिखारियो की बात। इन भिखारियो से मुझे अब और भी अधिक घृणा होने लगी है। भिखारियो के कारण ही इस सती की बुद्धि भ्रष्ट हो रही है। एक भिखारी के कारण ही **(परदे मे 'भिक्षादेहि' की पुकार—मन्मथ आता है।)** मन्मथ, तुमसे क्या कहा था मैंने ?

मन्मथ — देव, बाहर एक भिखारी आया है, ऐसा द्वारपाल कहता है।

दक्ष — फिर अभी तक वह क्यो चिल्ला रहा है ?

मन्मथ — वह देव से ही मिलना चाहता है।

दक्ष — भिखारियो से मिलने के लिए मेरे पास समय नही। उसे भिक्षा

देकर रास्ता दिखा दो ।

मन्मथ   पर वह कहता है कि मेरी भिक्षा कोई साधारण नही, इसलिए स्वय देव के पास मुझे ले चलो ।

दक्ष   उसकी मनचाही भिक्षा न दे सकने को मै कोई रक नही । ये भिखारी सारी दुनिया को अपने समान ही समझते है । मुझसे मिलने की क्या आवश्यकता है उसे ? जाओ, इस समय मेरा मन स्वस्थ नही । जो मागे, वह भिक्षा उसे दे दो और विदा करो । जाओ ।

मन्मथ   जो मागे, वह भिक्षा दे दू ?

दक्ष   हा-हा, वह जो मागे, दे दो । ये भिखमगे आखिर मागेगे क्या ? बहुत हुआ तो बहुत-सी जमीन माग लेगे या बहुत-सी गाये माग लेगे, इससे अधिक और क्या मागेगे ?

मन्मथ   जीहा, इससे अधिक और क्या मागेगे ? तो फिर जो वह मागे, वह दे दू उसे ?

दक्ष   बार-बार क्या पूछ रहे हो जी ? क्या तुम मुझे भी भिखारी समझ रहे हो ? जाओ, जो मागे, वह भिक्षा देकर उसे भगा दो । उसकी वह कर्कश पुकार पुन मेरे कानो मे नही पडनी चाहिए ।

मन्मथ   जो देव की आज्ञा ! (जाता है ।)

दक्ष   सती, अब तुझे अतिम बार पूछना चाहता हू । क्या तू स्वयवर के लिए तैयार है ?

सती   मैंने कब इन्कार किया है ? मै स्वयवर ही चाहती हूं ।

दक्ष   मतलब ? क्या उस भिखमगे के गले मे माला डालना चाहती है ?

सती   शकरजी को मैंने मन से वर लिया है ।

दक्ष   तेरा मन चाहे जिसे वर ले, पर कन्या-दान तो मैं ही करूगा न ?

सती   पर पिताजी, मेरी इच्छा यदि आप पूरी नही करे तो मैं किसके मुह की ओर देखू ? आप चाहे तो मा से पूछ ले . .

दक्ष   वह तुझसे भी अधिक मूर्ख है । तुझे छोडकर उसे और दीखता

ही क्या है ? तू जो कहेगी, वही उसे सच लगेगा। मेरे सम्मान की उसे चाहे परवा न हो, लडकी की जिद पति के अपमान की अपेक्षा उसे चाहे अधिक प्रिय लगती हो, फिर भी यह दक्षप्रजापति कभी भी अपनी कन्या उस भिखारी को नही देगा। (**परदे में---"दो-दो---अपनी कन्या दो।"**) कौन है यह उन्मत्त? विना सकोच के 'अपनी कन्या दो'--'अपनी कन्या दो' कहनेवाला यह कौन नराधम है ? (**मन्मथ आता है।**)

मन्मथ वही है---वही है---देव, यह वही है।

दक्ष वही कौन ? अभी जो भिखारी पुकार लगा रहा था, वह ? (**शकरजी प्रवेश करते हैं।**)

सती हा, यही है मेरे हृदयेश्वर। देखिये मा, पहले इधर देखिये।

शंकर दक्ष, दो, अपनी कन्या को मुझे दो।

दक्ष मन्मथ, यह भिखमगा भीतर कैसे आया ?

मन्मथ आपकी आज्ञा से।

दक्ष मेरी आज्ञा से ? मैने इसे भीतर आने की आज्ञा कब दी ?

मन्मथ जो यह मागे, वह इसे देने के लिए आप ही ने कहा था न ?

दक्ष फिर भिक्षा देकर इसे रास्ता क्यो नही दिखा दिया ?

शंकर दक्ष, तुम्हारी यह कन्या---यही मेरी भिक्षा है।

दक्ष अरे घमडी, याद रख, दक्ष तेरे जैसा पागल नही है।

मन्मथ जब मैने इससे कहा कि आपका आदेश है कि मनचाही भिक्षा उसे मिलेगी, तब यह बोला. .

शकर दो-दो, अपनी कन्या दो। वह देखो, मेरी प्रतीक्षा करती हुई वहा खडी है।

प्रसूती आइये, कैलासनाथजी, इस आसन पर विराजिये।

दक्ष मन्मथ, द्वारपाल को बुलाकर इसे धक्के मारकर बाहर निकाल दो।

मन्मथ जो आज्ञा। (**जाने लगता है।**)

प्रसूती ठहरो मन्मथ। यह क्या कर रहे है, देव ? हम लोग गृहस्थ है। अतिथि हमारे लिए ईश्वर जैसे होते है। कैसा भी हो, पर

अतिथि हमेशा सम्माननीय ही है । आइये कैलासनाथजी, इस आसन पर विराजिये। (शकरजी बैठ जाते है।)

दक्ष   नही, भिखारी के गदे स्पर्श से दक्षप्रजापति का आसन अपवित्र नही होना चाहिए। मन्मथ, मेरी आज्ञा का पालन करो।

सती   वचन-भग करके क्या अतिथि की अवहेलना होगी यहा ? खबरदार, मन्मथ

दक्ष   सती, तू मेरा अपमान कर रही है।

सती   वचन-भग की नीव पर यदि दक्षप्रजापति नये ससार की स्थापना कर रहे है तो ऐसा नया ससार बिल्कुल अस्तित्व मे ही न आये तो अच्छा ।

दक्ष   वचन-भग ? कपट करके लिया गया वचन यदि भग हो जाय तो क्या बुरा ? यदि मुझे मालूम होता कि दरवाजे पर खडा भिखारी यह है तो मैं भीख देने से ही इन्कार कर देता।

सती   और ऐसा करने मे प्रजापति के ऐश्वर्य की बडी कीर्ति फैल जाती ! है न ?

दक्ष   मन्मथ, तुमने इस भिखारी को कैलास पर देखा था न ? फिर मुझे ऐसा क्यो नही बताया ?

मन्मथ   मैं स्वय द्वार पर नही गया था। द्वारपाल ने मुझे जो खबर दी, वही मैंने आप तक पहुचा दी। दक्षप्रजापति के अनुचर महादेव को नही पहचानते ।

सती   इसे ही कहते हैं भवितव्यता ! जहा ऐश्वर्य की स्पर्धा हुई कि विकारवशता ऐन मौके पर इसी प्रकार दगा दे देती है।

दक्ष   तब तो यह तेरी ही चाल जान पडती है। यह कुछ नही। इस पहाडी गिद्ध का मैं मुह भी नही देखूगा।

सती   नही, एक बार देख ही लीजिये। प्रतिक्षण घोर अपमान हो रहा है, फिर भी प्रशान्त रहनेवाला इनका मुखमडल देखिये। सहनशील केवल दो ही होते है। एक प्रेमी और दूसरा भिखारी। इनमे दोनो का सयोग हो गया है।

मन्मथ   (स्वगत) अब यह मामला भडकेगा ! मायावती को यहा

और ले आऊ कि इस वाग्यज्ञ की पूर्णाहुति हो जायगी । यहा से जाते-जाते यह भी काम कर ू । (जाता है ।)

प्रसूती देव, अतिथि की पूजा कीजिए न ।

दक्ष क्या बक रही हो ? इस भिखारी की पूजा मैं करू ! जो मस्तक विधाता को छोडकर और किसी के भी आगे नही झुका, उस अपने मस्तक को क्या इस भिखारी के राख से भरे पैरो पर रखू ? जिस दक्ष का चरणोदक लेकर सारा जगत पवित्र होता है, वह दक्षप्रजापति क्या इस जोगडे के चरण पखारे ? विधाता द्वारा अर्पण किया हुआ यह अनमोल रत्न-जटित सुवर्ण मुकुट जिस मस्तक पर झलक रहा है, अपने उस मस्तक को इस पिशाच के चरण-स्पर्श से क्या मै भ्रष्ट कर दू ? नही, देवी, नही । यह मस्तक भले ही टूटकर गिर पडे, पर दक्षप्रजापति अपना वैभव नही भूलेगा ।

सती तो क्या आप अतिथि का अपमान करेगे ? और अतिथि भी कौन है ? यह वह अतिथि है कि जब दक्षप्रजापति की कन्या उसके घर गई थी, उस समय उसने उसका अनाहूत स्वागत किया, उसे बडप्पन दिया, निरपेक्ष भाव से उसका आतिथ्य-सत्कार किया । उसीका अपमान यदि दक्षप्रजापति ने किया तो ससार को एक अद्वितीय शिक्षा ही मिलेगी ! है न ?

दक्ष अतिथि के बहाने तू मुझे शत्रु के आगे गर्दन झुकाने के लिए बाध्य करना चाहती है । इतना ही तेरा उद्देश्य है । पर कान खोल-कर सुन ले—मै इस अतिथि की पूजा नही करूगा, नही करूगा ।

सती तो क्या आप अपना वचन-भग कर देगे ?

दक्ष वचन-भग ? शकर, मै अपना आधा राज्य तुझे देता हू । तू मुझे वचन से मुक्त कर दे ।

शकर सती के आगे मेरे लिए त्रिभुवन का साम्राज्य भी तुच्छ है ।

दक्ष रे पिशाच, जादू-टोना करके तूने मेरी लडकी को पागल कर दिया है, इसमे सदेह नही, अन्यथा प्रजापति की कन्या ऐसे भिखारी पर कभी मोहित न होती ।

सती   प्रेम का बीन बजते ही जो न झूमने लगे, ऐसी स्त्री त्रिभुवन मे भी नही मिलेगी । पिताजी, स्त्रियो के हृद्गत का पता पुरुषो को कभी नही चल सकता । वे उसे कभी समझ ही नही सकते । प्रेम ही स्त्री का सर्वस्व होता है । प्रेम को रक का ऐश्वर्य जितना अच्छा लगता हे, उतनी ही आपके धनी ऐश्वर्य की लालसा तिरस्करणीय लगती है ।

प्रसूती   देव, इस दीन दासी की विनती सुनिये । कम-से-कम बेटी के कल्याण के लिए तो वचन-भग न कीजिये ।

दक्ष   वचन का पालन करके क्या इस भूत से रिश्तेदारी जोडू ? इस पहाडी गिद्ध का श्वसुर बन जाने पर दुनिया मे मेरा नाम खूब ही फैल जायगा ? क्यो ? सती, यह हठ छोड दे ।

सती   प्रतिकार करने की पूर्ण सामर्थ्य रखते हुए भी अपने प्रेम के लिए निर्विकार मन से जो इतना अपमान सहन कर रहे है, उनके लिए यह दाक्षायणी ऐश्वर्यशाली पिता का ही त्याग कर देगी । देखिये पिताजी, देखिये इस धीरगभीर मूर्त्ति की ओर । पहले आप अपना हठ छोडिये ।

(मायावती मन्मथ को एक तरफ हटाकर प्रवेश करती है ।)

माया   महादेव की जय !

दक्ष   इस दक्ष प्रजापति के सामने न कोई देव है और न कोई महा-देव ही है ।

माया   पितामह ब्रह्माजी वचन भग करनेवाले को इसके आगे प्रजापति के पवित्र पद पर रखे रहे, ऐसा कभी नही होगा । वह अपना यह अधिकार कभी नही भूलेगे ।

दक्ष   वचन-भग ! अरेरेरे ! गृहस्थाश्रम ने आखिर मुझे धोखा दिया, क्या करू ? अब क्या करू ?

माया   अपने वचन का पालन करो ।

दक्ष   समझ गया ! यह भवितव्यता नही, यह घर-भेदी का षड-यत्र है । यह वचन-पालन नही, कपट की वलि है । यह उदा-रता नही, बल्कि मेरे वैभव पर डाका डालने का पैशाचिक

प्रयत्न है। मायावती, मायावती, यदि तुम यह सोच रही हो कि मेरे वचन-भ्रष्ट हो जाने से पितामह ब्रह्माजी मुझे पदच्युत कर देगे तो यह तुम्हारा भ्रम है। फिर भी मैं तुम्हारा उद्देश्य सफल नही होने दूगा। तुम यह न समझ लेना कि मेरे पदच्युत हो जाने पर इस भूत को वह पद मिल जायगा। तुम्हे इस आशा के लिए अवसर ही क्यो दू? मुझे अपने ऐश्वर्य की परवा है। लडकी के कल्याण की नही। देवी, तुमने अनुमति दे ही दी है। सती ने तो कन्यादान करने तक ही पिता का पितृत्व माना है। ठीक है। शकर, मै अपनी कन्या तुझे देता हू। परतु स्त्रीधन के रूप मे मनुजी के नियमानुसार उसे तू क्या देगा?

शकर मै अपना सर्वस्व ही उसे दे दूगा।

दक्ष तेरा सर्वस्व? भिक्षा-पात्र, वाघ का चमडा, रुद्राक्ष की माला, लोहे का त्रिशूल और जटा के जतु, यही तेरा सर्वस्व है!

शकर अपना हृदय ही मैने सती को दे दिया है।

माया तुम धन्य हो सती। पति का हृदय जिसे स्त्री-धन के रूप मे मिलता है, वह प्रजापति के सिहासन को भी ठुकरा देगी। दक्ष, तुम्हारी सती वडी भाग्यशालिनी है। उसे रक का जो ऐश्वर्य आज मिल रहा है, उसके आगे तुम्हारा ऐश्वर्य कुछ नही है। जाओ, कन्यादान की तैयारी करो।

दक्ष कन्यादान? आजतक सती नाम की मेरी एक लडकी थी। आज वह मर गई है। यह कन्यादान नही, यह उसकी उत्तर-क्रिया है। उसका शव इस पिशाच को सौंपकर अब मैं मुक्त हो जाऊगा।

माया दक्ष, अगर यह किसी की उत्तर-क्रिया होगी तो वह होगी तुम्हारे ऐश्वर्य की। जिसके वल पर तुम प्रजापति हुए हो, वह शक्ति आज कैलासवासी होगी। शिव-शक्ति का यह सयोग सारे ससार का मगल करेगा, परतु इस कन्यादान के वारे मे अमगल शब्द कहनेवाले तुम्हारे मुख को अवश्य भयकर धोखा देगा।

दक्ष बस सुन चुका ! बस करो तुम्हारा यह भविष्य—जाओ देवी, कन्यादान की तैयारी करो ।

शंकर अहा हा ! आज मैं पूर्ण हो गया ।

(**पर्दा गिरता है ।**)

तृतीय अंक

दृश्य एक

(दक्ष और मायावती)

दक्ष प्रजा जब मुझसे पूछती कि मायावती कौन है, तब मै यही उत्तर देता कि प्रसूती के विवाह के दिन मायावती नाम की एक योगिनी स्वयभू मनु के घर से मेरे प्रासाद मे रहने आई । परतु अब मेरे सम्मुख ही यह प्रश्न उपस्थित हो गया है कि सारे विश्व का शासन करनेवाले दक्ष को बुद्धिवाद सिखानेवाली तुम कौन हो ?

माया मै कौन हू ? मै कोई नही । आप कोई है—प्रजापति है । प्रसूती कोई है—वह दक्ष की रानी है । कश्यप कोई है—वह दक्ष के राजपुरोहित है । मन्मथ भी कोई है, रति भी कोई है । परतु मै ? मै कोई नही हू । इसलिए सारे ससार का मुझ पर अधिकार है, क्योकि मै एक भिखारिन हू और इसीलिए सारे ससार का कल्याण देखने का मुझे अधिकार है ।

दक्ष ठीक है । फिर मजे से सारे ससार का कल्याण देखती रहो । पर दक्ष प्रजापति को बुद्धिवाद सिखाने का साहस क्यो करती हो ?

माया ससार का कल्याण हो, इसलिए आपको बुद्धिवाद बताने के लिए मुझे बाध्य होना पडता है । प्रजापति दक्ष, यह यज्ञ करके आप कौन-सा पुरुषार्थ साधना चाहते है ?

दक्ष मुझे अपने अपमान का बदला लेना है और इसलिए नाश का विनाश करने के लिए मुझे विवश होना पडा है । हिमालय के उस बैताल का अधिकार जबतक नष्ट नही हो जाता तबतक मुझे सतोष न मिलेगा ।

माया क्या आप दामाद से बदला लेगे ? दक्ष अपनी बेटी के पति का

अकल्याण करके आप पिता के वात्सल्य का कौन-सा आदर्श उपस्थित करना चाहते है ?

दक्ष मायावती, उस पहाडी भूत के प्रति मुझे पहले से ही घृणा थी। सती के दुराग्रह के कारण वह मेरा दामाद हुआ। कालातर से उसके प्रति मेरा क्रोध शान्त भी हो जाता, परतु मायावती, उसका घमड दिन-प्रतिदिन बढने लगा। मेरी समझ मे नही आता कि इन दरिद्रियो को अपनी दरिद्रता से ही इतना प्यार क्यो होता है ? थोथे अभिमान को छोडकर यदि वह मेरी शरण आ जाता तो अपनी बेटी के पति के नाते मै उसे आश्रय दे देता। परतु जब मुझे भृगु ऋषि के यज्ञ की याद आ जाती है, तब उसमे उसके द्वारा हुआ मेरा अपमान आखो के सामने मूर्त्त हो उठता है और मेरे तन-बदन मे आग लग जाती है। इसी आग को शान्त करने के लिए मुझे इस यज्ञ की धधकती हुई अग्नि जलानी पड रही है।

माया तो क्या आप सोचते है कि आग से आग शात हो जायगी ? दक्ष, महादेव ने भृगु ऋषि के यज्ञ मे आपका क्या अपमान किया ?

दक्ष यह प्रश्न ही मुझे दुस्सह हो उठता है। उस प्रसग की स्मृति को मैंने द्वेष की प्रचड शिला के तले अपने हृदय मे दबाकर रख दिया है। उसके उच्चार करने के लिए उस शिला को हटाकर दूर कर देना होगा। द्वेष की उस शिला को यज्ञ-भूमि की कोनशिला बनाकर, अब मैंने यह यज्ञ आरभ किया है। मायावती, इस यज्ञ के कारण मुझे जितना आनद होता है, उतना ही उस यज्ञ का स्मरण होते ही मुझे क्रोध हो आता है। भृगु ऋषि के यज्ञ-मडप मे मेरे प्रवेश करते ही सारे देव, मानव, यक्ष और गधर्व आदि ने मेरा जो अकल्पनीय स्वागत किया, वह तुम देखती तो तुम्हे भी मुझ जैसा ही लगता। स्वय भृगु ऋषि मडप के द्वार पर उपस्थित हुए और अपने देवतुल्य हस्त का आधार देकर उन्होने मेरा स्वागत किया। गगा, यमुना और सरस्वती जैसी पवित्र नदियों ने अपने जगतपावन जल से मेरे चरण धोये। स्वय

विश्वदेव ने मेरी दीठ उतारी। मुख्यासन पर आरूढ होने के लिए मेरे आगे बढते ही सभी ने मेरे नाम की इतनी प्रचड जय बोली कि सारा त्रिभुवन हिल उठा। पर क्या ? प्रलय काल का क्षुब्ध सागर जिस तरह एकदम शान्त हो जाय, उसी तरह उस जय-ध्वनि की उद्दाम लहरे उस समाज-सागर मे उमडते-उमडते सहसा विलुप्त हो गई। यह क्यो हुआ ? इसका कारण था---राख से पुते हुए उस जोगडे के मैले-कुचैले चेहरे पर की एक हल्की-सी हास्य रेखा।

माया　अच्छा, तो कुल मिलाकर आपने यह धारणा बना ली है कि महादेव को आपके ऐश्वर्य मे ईर्ष्या हुई।

दक्ष　नही, यदि उसे ईर्ष्या होती तो मुझे आनद ही होता। नही, मायावती, उसे ईर्ष्या नही हुई। तिरस्कार-भरी हास्य की छटा से उसने मुझपर दया दिखाई। मेरे ऐश्वर्य के तूफान को हास्य की केवल एक फूक से अगू ा दिखाकर उडा दिया। ये भिखारी यदि हमसे ईर्ष्या करे तो हमे आनद ही होगा। परतु ये कगाल हमारे ऐश्वर्य की उपेक्षा न करके उल्टे उस ऐश्वर्य का मूल्य ही घटिया सिद्ध करना चाहते हैं। इसी पर हमे क्रोध आता है।

माया　ऐश्वर्य की उपेक्षा करना, यही हम भिखारियो का बाना है। पर दक्षराज, आप उसी समय अपने अपमान का बदला लेने की स्वाभाविक लालसा कैसे रोक पाए ?

दक्ष　इतना अपमान होने के बाद क्या उसी समय उससे बदला लेना मैं छोड देता ? मैने उसे एकदम वही शाप दे दिया।

माया　अच्छा ! श्वसुर ने दामाद को शाप भी दे दिया ?

दक्ष　यह तो उस पगले का भाग्य था, जो उसे केवल इतना ही शाप देकर कि अन्य देवताओ की बराबरी से यज्ञ का हविर्भाग उसे न मिले, मै उस समय चुप रह गया। मायावती, उस समय मैने शाप दिया, पर अब उस शाप के उद्यापन के लिए मैं यह यज्ञ करूगा। पितामह ब्रह्माजी की कृपा से उत्पत्ति करने का अधिकार मुझे प्राप्त हुआ है। स्थिति का कर्ता बेचारा विष्णु मेरे भय से

सर्प की कुडली पर लोट रहा है । इस जोगडे के पास प्रलय करने का अधिकार है और सिर्फ इसीका उसे बडा घमड है । इस यज्ञ से मै उस प्रलय का ही प्रलय कर ूगा—नाश का ही विनाश कर दूगा । पृथ्वी अनत है, उत्पत्ति अनन्त है, काल भी अनन्त है । फिर अनन्त जीवो को अनन्त काल तक इस अनन्त विश्व मे क्यो नही रहना चाहिए ? मायावती, सोचकर हो, चाहे विना सोचे हो अथवा चाहे अविचार से हो, पर इस कार्य मे मैने अव हाथ डाला है । इसे पूरा करने मे चाहे मेरा मस्तक टूटकर गिर पडे, फिर भी अव मै पीछे नही हटूगा । तुम्हारा बुद्धिवाद व्यर्थ है ।

माया कैसा पागलपन है यह । काल-चक्र की अवाधित गति को जो रोकना चाहेगा, वह उस चक्र के एक धमाके के साथ स्वय ही कुचल जायगा । वह गति अविच्छिन्न है और इसीलिए उसे वद करने का प्रयत्न करना स्वय अपना ही नाश कर लेना है । वह ईश्वर की शक्ति है और इतनी जाज्वल्य है कि उस पर पूरा नियत्रण रखना स्वय उसे भी कठिन हो जाता है । ईश्वर वहुत वडा है और आप उसी के अधिकार को समाप्त कर देने पर तुले है । पर सावधान, कही ऐसा न हो कि इस प्रयत्न मे आपको ही अपनी आहुति दे देनी पडे । शकरजी का नाश क्या आपकी बेटी के लिए ही वैधव्य नही ?

दक्ष अपने ऐश्वर्य की पुष्टि के लिए अपनी लडकी के सुहाग की आहुति देना भी मैं पुरुषार्थ समझूगा । अपने नये ससार को मुझे यही शिक्षा देनी है ।

माया जिस ससार मे ऐश्वर्य की पुष्टि के लिए अपनी पुत्री की भी बलि दी जाय, उस ससार को आग लग जाय, तो अच्छा ।

दक्ष भिखारियो के मुह से ऐसे ही उद्गार निकलेगे । मै ऐसा विश्व निर्मित करना चाहता हू, जो अवाधित गति से वढता रहे—जिसकी सत्ता अमर्यादित रहे और गति निर्वध हो । जब ऐसे विश्व पर मैं अपनी इच्छानुसार शासन करने लगूगा, तभी मेरा ऐश्वर्य

नार्थक होगा । जाओ मायावती, तुम्हारा बुद्धिवाद मै काफी सुन चुका ।

माया दीपक की ज्योति पर मर मिटनेवाले पतग को बचाने के लिए दीप बुझाकर क्या आप ससार मे अधेरा कर देना चाहते है ? दक्षराज, आपकी जो इच्छा हो, सो कीजिये, परतु उसके फल भोगने के लिए भी तैयार रहिये । **(जाती है ।)**

दक्ष **(स्वगत)** भिखारियो की बुद्धि भी भिखारी होती है और उनका बुद्धिवाद उससे भी अधिक भिखारी होता है । जितना ऐश्वर्य इस समय मेरे पास है, उसी पर मै सतोष क्यो मानू ? मै अपने ससार को विस्तृत करूगा और इसीलिए मुझे पहले प्रलय को नष्ट कर देना चाहिए। लडकी यदि विधवा होती है तो हो जाय । मुझे उससे कोई मतलब नही । उसे भी अपने कर्म का फल भोगना चाहिए। उसके सुख के लिए मैं अपने ऐश्वर्य की बाढ क्यो रोकू ? उसने भी कहा मेरी बात मानी थी ? जब उसने मेरे अधिकार को ठुकरा दिया, तब मैं क्यो उसके लिए अपने अपमान को अलकार मानकर चुप बैठू ? यदि मृत्यु आ जाय तो कोई परवा नही । ससार से मृत्यु शब्द जबतक मैं समाप्त नही कर दूगा, तबतक मैं नही मरूगा । प्रलय के ऐश्वर्य का सपूर्ण नाश हो जाने पर वह घमडी जोगडा जिस समय हिमालय के शिखर से भागकर कन्याकुमारी के रेतीले किनारे पर धूल खाता पडा रहेगा, तब उसे अच्छी तरह मालूम हो जायगा कि दक्षप्रजापति को अपमानित करने का फल क्या होता है ? मेरा दामाद ! कैसा मेरा दामाद ! जिस दिन यह भिखारी के श्वसुर की पदवी नष्ट होगी, उसी दिन, सच्चे अर्थ मे, दक्ष-प्रजापति के पुरुषार्थ की परमावधि होगी । यह यज्ञ होना ही चाहिए और उसमे शकर की आहुति पडनी ही चाहिए । **(जाता है ।)**

दृश्य दो

(शृंगी और भृंगी एक गंधर्व को पकड़कर लाते हैं।)

शृंगी बता, तू कौन है ? कन्या है, या पत्नी ?
गंधर्व मैं कन्या नही, परन्तु मेरी कन्याएं हैं और पत्नियां भी हैं।
शृंगी तेरे कन्या है ? तो क्या तू दक्षप्रजापति है ?
भृंगी नहीं जी, यह कैसे दक्षप्रजापति होगा ? यह तो मन्मथ जैसा दीखता है।
गंधर्व (स्वगत) कम-से-कम इसने तो मुझे मन्मथ कहा। तो क्या गंधर्वलोक मे सब लोग मुझे व्यर्थ ही कुरूप कहते है ?
शृंगी क्यो रे बोलता क्यो नही ?
गंधर्व क्या बोलू ?
शृंगी कुछ भी बोल। न बोलने वाले प्राणी मुझे बिल्कुल नही भाते। पहले यहा एक मन्मथ नामक प्राणी आया था। खूब बोलता था। वह हमारे लिए एक मा ले आया। तू जानता है, मा किसे कहते है ?
गंधर्व (स्वगत) हम गंधर्वो की कहा मे आई मा ? (प्रकट) मैं नही जानता।
भृंगी तू झूठ बोलता है। जब कि तू मन्मथ है तब तुझे यह अवश्य मालूम होना चाहिए कि मा क्या है ?
गंधर्व (स्वगत) अब क्या करू ? इसे कैसे समझाऊ ?
शृंगी बोल-बोल, जल्दी बोल। कह मा।
गंधर्व मा।
शृंगी बता अब। कैसा लगा तुझे ? क्या 'मा' कहते ही तुझे आनद नही आया ?
गंधर्व हा आया तो।
शृंगी क्यो आनन्द आया ?
गंधर्व तुम्हे आनन्द आया, इसलिए मुझे भी आया।
शृंगी हमे आनद क्यो आया ? बोल मा कहते ही हमे आनद क्यो आया ?

गधर्व (स्वगत) अव क्या वताऊ अपना मिर ? भगवान जाने ये मुझे अव दक्ष के यज्ञ मे जाने देते है या नही । इन्हे यह पता ही न लगने देना चाहिए कि मै दक्ष-यज्ञ मे जा रहा हू ।

भृ गी क्या सोच रहा है, रे ? यह जानने के लिए कि मा कहते ही क्यो आनद होता है, क्या इतना सोचना पडता है ? अच्छा, एक वात तो सिद्ध हो गई कि मा क्या होती है, यह तू नहीं जानता । अव वता तेरी स्त्री है ?

गधर्व मेरी बहुत-सी स्त्रिया है ।

भृंगी क्या वे सव स्त्रिया तुझसे मिलती है ?

गधर्व हा, मिलती है ।

भृंगी अरे वाह, क्योजी भृ गी, फिर यह प्राणी कितने गुना पुरुष हुआ ?

गधर्व मै केवल एक ही पुरुष हू ।

भृ गी तू मन्मथ है । हमे तेरा सच्चा पता न चल पाये इसलिए तू गप मार रहा है । पर याद रख, हम अब सब समझने लगे है । पहिले जैसे जगली नही रहे ।

भृंगी इस रास्ते से तू कहा जा रहा है ?

गधर्व इस रास्ते से मै दूसरे रास्ते की ओर जा रहा हू ।

भृंगी फिर तू अभी ऊपर हवा मे तैरता हुआ क्यो जा रहा था ? और तेरे साथ जो थे वे सब कौन थे ? वे सब तेरे जैसे ही दीख रहे थे ।

गधर्व उन्हे भी मन्मथ ही कह सकते हो ।

भृंगी अच्छा, अब यह बता कि तेरे साथ की वे स्त्रिया कौन है ?

गधर्व वे सब रति है ।

भृंगी वे तेरी कन्याए है शायद ?

गधर्व : नही-नही । वे सब मेरी पत्निया है ।

भृंगी याने वे अपने पिताओ की कन्याए है ? यही मतलब है न ?

गधर्व · (स्वगत) अब इस पागल को कैसे समझाऊ ? इसके हाथो से छुटकारा पाना अब सभव नही दीख पडता । अब कहा का

दक्ष-यज्ञ ?

शृंगी — क्यो रे, बोलता क्यो नही ? क्या तू यह नही जानता कि कन्या के पिता होता है ? सुन, मैं तुझे बताता हू । स्त्री के यदि पिता हुआ तो वह कन्या होती है, पति हुआ तो वह पत्नी होती होती है और उसका विवाह होने के बाद उसे अगर शृंगी, भृंगी और नन्दी का लालन-पालन करना पडा तो वह मा होती है । समझा ?

गंधर्व — हा, समझ गया । अब कृपाकर मुझे छोड दो न ?

भृंगी — अरे मन्मथ, तेरा धनुष कहा है ? उसकी जगह यह लकडी का लोढा क्यो अटका रखा है गले मे ?

शृंगी — अरे वाह रे भृंगी, तुझे इतनी भी अक्ल नही ! जब नदी बहुत ऊधम मचाता है तब मा उसके गले मे लकडी का इसी तरह एक मोटा-सा लोढा अटका देती है । यह तो तूने देखा है न ? यह भी नदी की तरह ऊधम मचाता होगा इसलिए इसकी मां ने इसके गले मे यह लोढा अटका दिया है । (**गंधर्व से**) पर क्यो रे मूर्ख, इतनी स्त्रियो के लोढे तेरे गले मे बधे हे, फिर भी तू ऊधम मचाने से बाज नहीं आता शायद ?

गंधर्व — अजी, यह मेरी वीणा है । इसके सुर मै गाता हू ।

शृंगी — गाने के लिए वीणा के सुर की क्या आवश्यकता ? मैने अपने महादेव को गाते सुना है । जब देवदार के वक्षो की शाखाओ मे से हवा बहने लगती है, तब उसके सुर मे सुर मिलाकर देव गाने लगते हे । गाना मै भी जानता हू । उसमे धरा ही क्या है ? जितना सभव हो सके, उतना मुह खोल दो और खूब हाथ नचाकर आ ऽऽऽऽ ऊ ऽऽऽऽ चिल्लाओ कि हो गया गाना ।

गंधर्व — हा, बिल्कुल ठीक है । पर अब मुझे मुक्त कर दो न ?

भृंगी — तू मन्मथ हे न ? फिर क्या महादेव का दर्शन किए बिना ही चला जायगा ? कहा जायगा तू ?

गंधर्व — वे बाकी के मन्मथ गये हे, उन्ही के साथ मुझे भी जाना चाहिए ।

शृंगी — पर तू तो दूसरे रास्ते की ओर जानेवाला है न ?

गंधर्व तुम बिल्कुल ठीक कह रहे हो। पर अब मुझे जाने दो न ? मेरी सब पत्निया आगे चली गई है। वे मेरी प्रतीक्षा कर रही होगी।

भृंगी यह सोचकर कि तुम पकड लिये गए होगे, वे आगे बढ जायगी ?

गंधर्व . नही-नही वे ऐसा कभी नही करेगी। वे मेरी पत्निया जो हैं।

शृंगी क्यो भाई भृगी, क्या छोड दू इसे ?

भृंगी मैं सोचता हू, इसे देव के पास ले चले। इसने हमारी सारी फसल रौंद डाली है। इसे दण्ड मिलना ही चाहिए।

गंधर्व हम कुबेर के मन्मथ है। हम सिर्फ धन पहचानते हैं। हमारा अनाज से कोई परिचय न होने के कारण, भूल से मैंने तुम्हारी फसल रौद दी। इसके लिए मुझे क्षमा कर दो।

शृगी . क्या कहा ? तुमने अनाज नही देखा ? फिर खाते क्या हो ?

गंधर्व हम कुछ भी नही खाते।

भृंगी कद-मूल भी नही ? हम लोग पहले कद-मूल खाते थे, परन्तु मा के आने के बाद से अनाज खाने लगे।

गंधर्व . मनुष्य खाते है। हम पीते हैं। केवल अमृत पीते हैं।

भृंगी अमृत ? यह क्या होता है ?

गंधर्व वह पानी की तरह होता है और उसमे फूलो की तरह सुगध होती है। तुम यदि मुझे मुक्त कर दो तो तुम्हारे लिए अमृत ला दूगा।

शृंगी यह तो हमे अपनी मा से पूछना पडेगा। मा जो देती है, वही हम खाते और पीते हैं।

गंधर्व तो जाओ और मा से पूछकर आ जाओ। पर अब मुझे छोड दो न ? मेरी पत्निया मेरे लिए वहा रुकी होगी।

भृंगी हा, यह बात तो जरूर होगी। हमारी मा जब दूर चली जाती है, तब महादेव भी इसी तरह तडपते हैं। शृगी, अब छोड़ दो इसे।

शृंगी . अच्छा, तो जा। पर अब आगे हमारी फसल इस तरह कभी मत रौंदना। समझा ?

गंधर्व . भगवान तुम्हारा भला करे। (स्वगत) तो कुल मिलाकर दक्ष

यज्ञ का अपूर्व समारोह मुझे देखने को अब मिल जायगा । उस यज्ञ से प्रजय का सहार हो जाने पर प्रलय-कर्ता के इन गणो से हमे फिर कोई कष्ट न होगे । हम लोगो के पीछे लगी यह सहार की झझट हमेशा के लिए जाती रहेगी । तब हम सारे विश्व मे छा जायगे और सब लोगो को गाने के लिए बाध्य कर देगे । (जाता है ।)

भृगी देखा, अब हम कितने होशियार हो गए है ? अब मन्मथ भी हमसे डरने लगा है । यह सब मा की शिक्षा का प्रभाव है । पर क्यो रे भृगी, वह जाते-जाते अभी क्या बुदबुदा रहा था ?

भृंगी कुछ भी बकता हो । हमे उससे क्या करना ? अब तुम सीधे मा के पास चले जाओ और उनसे यह सब हाल कह दो । मैं यही बैठे-बैठे फसल की रखवाली करता हू । जाओ । (भृंगी जाता है ।)

दृश्य तीन

सती : (स्वगत) पिताजी कहा करते थे कि दरिद्रता मे सुख नही । (हँसकर) ठीक तो है । बिना अनुभव के वह कैसे जान सकते हैं कि दरिद्रता मे सुख है या नही ? सुख की सीमा का अनुमान ऐश्वर्य से नही लगाया जा सकता । ऐश्वर्य मे जहा देखो वहा बधन । यह मत करो, वहा मत जाओ, यह तुम्हे शोभा नही देता—इस प्रकार के अनेको बधनो से हमे अपने आपको जकड लेना पडता है । ऐश्वर्य का बाना ही यह है कि जो दूसरे कहे वह सच और जो हमारा मन कहे वह झूठ । मुझे हिमालय देखने की इच्छा थी । पर पिताजी नही चाहते थे कि मैं हिमालय जाऊ । मुझे कितना गिडगिडाना पडा । तब कही उनकी अनुमति मिली । वही यहा देखो, कितनी स्वतन्त्र हू ! कही भी घूमू, कोई बन्धन नही । किसी की अनुमति नही लेनी पडती । महादेव मुझे कही भी जाने से नही रोकते । मेरी इच्छा और उनकी अनुमति दोनो जैसे एक साथ ही उत्पन्न होती हैं । ऐसी स्थिति मे अनु-

मति का प्रश्न ही नही उठता । मेरे शृगी और भृगी दोनो कितने स्नेहशील है । मेरे परे उन्हे जैसे दूसरा कुछ सूझता ही नही । मेरा शब्द उन्हे वेदतुल्य लगता है । यहा मन का स्वैर सचार और पैरो की गति दोनो जैसे एकरूप हो गए है । दरिद्रता की यह स्वतन्त्रता देखकर, सिहासनस्थ प्रजापति के भी मुह मे पानी आ जायगा । गरीब बेचारा राजा ऐश्वर्य के बधनो मे चारो तरफ से बधा होने के कारण जाले की मकडी की तरह अपने ही द्वारा निर्मित बधनो मे चक्कर काटता रहता है । यही मेरे पिता की भी स्थिति है । और मै ? अहाहा ! मेरे जैसा धन्य कौन है ? स्वतन्त्रता के निर्मल वातावरण मे स्वर्ग तक उडान लेनेवाले गरुड की तरह मै अनिरुद्ध सचार कर रही हू । ऐश्वर्य मे क्या यह सुख मुझे कभी मिल सकता था ? मेरे पिताजी कितने भ्रम मे थे ? मेरे लिए वह ऐश्वर्य खोज रहे थे । यह सुख, यह आनद, यह निर्मल और अकृत्रिम प्रेम, यह अलौकिक सहवास, क्या ऐश्वर्य मे मुझे कभी मिल पाता ? कितना मधुर सहवास है ? बधन का यहा जैसे अस्तित्व ही नही है । बस, स्मरण करते ही देव (**शकरजी प्रवेश करते है**) सामने आकर खडे हो जाते है ।

शकर क्या सोच रही हो, देवि ? प्रिये, तुम जन्म से ही ऐश्वर्यशालिनी हो । हिमालय की पथरीली दरिद्रता से कही ऊब तो नही उठी ? भावना के आवेश मे प्रकृति की रमणीयता क्षण-भर के लिए मन को आकर्षित कर लेती है, पर जब मन वास्तविकता के ससार मे लौट आता है, तब ऐश्वर्य की गतकालीन स्मृति दु ख देने लगती है । तुम्हे कही यही अनुभव तो नही हो रहा है ?

सती यह आप क्या कह रहे है देव ? कम-से-कम आप को तो ऐसा नही कहना चाहिए ।

शकर क्यो नही कहना चाहिए ? इधर-उधर शून्य-दृष्टि से देखती हुई तुम दीर्घ निश्वास छोडने लगी, तब भी क्या मै यह समझू कि तुम आनद मे हो ?

सती आनद के निश्वास भी इसी प्रकार बडे लबे होते है, देव। आपके मन मे यह शका ही कैसे आई कि ऐसे स्वतन्त्र वातावरण मे मुझे दु ख होगा ?

शकर नही देवि, मुझे शका नही आई। पर यह सच है कि मुझे ऐसा आभास हुआ।

सती आखिर आभास ही तो है। वह सच कैसे होगा ?

शकर ऐसा क्यो कहती हो ? देखो, जहा देदीप्यमान सुवर्ण तन्तुओ से बुने वस्त्रो से तुम्हारी सपूर्ण देह आच्छादित होती थी, वहा ये

सती सूर्य प्रकाश-मे चमकनेवाले निर्मल वल्कल आ गए है। क्या ये बुरे लगते है देव ? देव, सुवर्ण ततुओ का कडापन अब नही रहा। उसकी जगह सुवर्ण को भी लज्जित करनेवाले केले के ये तन्तु क्या अधिक मृदु नही है ?

शकर तुम्हारी देहलता के मार्दव की वे कभी बराबरी नही कर सकेगे। और देखो, सुवर्ण के अलकारो से सुशोभित होनेवाले तुम्हारे इन कर-पल्लवो पर

सती अब फूलो के आभरण अधिक सुशोभित दीख रहे है। देव, पल्लवो के अग्रो मे पुष्पो का आना क्या स्वाभाविक ही नही ?

शकर मस्तक का रत्नजटित किरीट निकल जाने के कारण

सती हवा मे इतस्तत बिखर जाने का आदी केश-कलाप अब बधन-मुक्त हो गया।

शकर हीरो और मोतियो की मालाओ से आच्छादित रहनेवाला यह शख जैसा स्वच्छ कठ

सती सूना-सूना लगता हो तो यह शखधारी करमाला यदि इस तरह अपने गले मे डाल लू, तो क्या वह अधिक सुन्दर नही लगेगा ?

शकर नही-नही देवि, तुम अब मुझे पागल कर दोगी।

सती पागल को और पागल कैसे बनाऊगी ? हा, चलने दीजिए, पागल का प्रलाप इसी प्रकार चलने दीजिए। मै समझूगी, मुझे कर्ण-भूषण मिले।

शकर क्या इस प्रकार मेरे हाथ ही उखाड देने पर ?

सती मुह से बोलने मे आपको इससे क्या रुकावट होगी ?

शंकर मेरे हाथ ही जब इस प्रकार बाध दिये गए है, तब मैं तुम्हारी मूर्त्ति को नख-शिखान्त कैसे देख सकता हू और उसका वर्णन भी कैसे कर सकूगा ? फिर भी स्मृति के भरोसे कहता हू । पावो के नुपूर चले जाने से ..

सती मेरे पैरो की आहट से अब आप खूब परिचित हो गए हैं। यही न ?

शंकर यदि तुम मेरे मुह के शब्द ही यू बन्द करने लगो तो मै बोलू कैसे ?

सती मैंने अभी आपका मुह कहा बन्द किया है ?

शंकर लो, तो अब मुह भी बन्द कर दो । हा, अरे लज्जित क्यो होती हो ? करो, मुह भी बन्द करो । अहा-हा ! जिन ओठो के चुबन की कल्पना से मुझे तुम्हारी सुन्दरता प्रथम बार ही दिखाई दी, वही तुम्हारे कमल-कलिका के समान ये स्निग्ध ओठ

सती . उन्हे इन प्रवालो के सपुट मे छिपाकर रखने का समय यह नही।

शंकर यह समय क्यो नही ? नही देवि, मुझे इस तरह धोखा मत दो। मै पागल हू, इसमे सन्देह नही । पर देवि, अभीतक मेरी वृत्ति स्वच्छद थी । तुम बार-बार कहती हो कि स्वतत्रता मिल जाने से तुम्हे आनद हो रहा है । पर प्रिये, तुम मेरी स्वतन्त्रता छीनकर अपना बधन मेरे पल्ले क्यो बाध रही हो ? नही, अब मैं तुम्हारी एक नही चलने दूगा । स्वतत्रता का आनद तो तुम लूटो, पर मैं क्यो पराधीन रहू ? मै कुछ नही सुनूगा । आम्रफल की नोक की तरह तुम्हारी यह चिबुक इस प्रकार पकडकर **(शृगी आता है।)**

शृगी मा-मा। यह देखो क्या चमत्कार है ?

शंकर मूर्ख कही का ! इसमे क्या चमत्कार है ? आनद मे तल्लीन होकर प्रेमी अपनी प्रेयसी के ओठो के पास अपने ओठ ..
(सती हाथ से उनका मुंह बन्द कर देती है ।)

सती कुछ लज्जा भी है आपको ? शृगी के सामने यदि आप ऐसी

वाते करे, तो उसे क्या लगेगा ?

शकर उसे यही लगेगा कि उसके देव आनद के महासागर मे मस्त होकर खूब तैर रहे है।

शृंगी हा-हा, देव, वे सव तैरते हुए ही जा रहे हैं। देखिये, बहुत-से मन्मथ और अनेक रति आकाश मे तैरते हुए लगातार आगे बढे जा रहे है।

सती अरे पगले, इतने रति और मन्मथ कहा से आयगे ? रति एक ही है और मन्मथ भी एक ही है।

शृंगी मा, मै यू धोखा नही खा सकता। मेरे पास आखे है और उन आखो से मुझे जो दीखता है, वह सब ठीक होता है। मैंने अपनी आखो से अनेक मन्मथ-रति प्रत्यक्ष देखे है। वे सव आकाश मे उडते हुए जा रहे हैं।

सती कदाचित हो भी। आकाशस्थ देवताओ ने असख्य विश्व के असख्य रति-मन्मथ मेरे इन हृदयेश्वर पर निछावर कर दिए होगे।

शकर ऐसा लगता है कि मेरे सहवास से कदाचित तुम भी अव पागल होने लगी हो।

सती यह पागलपन नही है, देव। मेरी दृष्टि कोई दूसरा कैसे पा सकता है। शृगी कहता है कि उसके पास आखे है, पर वेचारा अधा है। इतने दिनो से यह आपके सहवास मे था, पर उसे आपका सौन्दर्य नही दीखता था।

शृगी : क्यो नही दीखता था। मुझे सब दीखता था। ये सर्प, यह व्याघ्र-चर्म, यह त्रिशूल, ये रुद्राक्ष, ये भस्म के पट्टे—इनके कारण देव की शोभा वड़ी उग्र दीखती थी।

सती : पर क्या देव आजकल भी उतने ही उग्र दीखते है ?

शृंगी : **(सोचकर)** नही, आजकल वह उतने उग्र नही दीखते। इन सर्पों मे पहले जैसी तेजी नही रही, व्याघ्र-चर्म भी अनेक जगह जीर्ण हो गया है। रुद्राक्ष की माला कभी-कभी टूटी हुई दिखाई देती है। और ये भस्म के पट्टे ? मुझे लगता है कि आजकल

कभी-कभी वे होते ही नही । त्रिशूल से हम लोगो ने जबसे काम लेना शुरू कर दिया है, तब से वह मैला हो गया हे .

शकर तभी, मै देखता हू कि आजकल मेरा त्रिशूल कभी-कभी विलुप्त हुआ दिखाई देता है और कभी-कभी वह अचानक उत्पन्न हो जाता है । कौन-सा काम ले रहे हो मेरे त्रिशूल से ?

शृगी आजकल उससे हम जमीन जोतते हैं और अनाज पैदा करते है । मा ने हमे यह सिखाया है ।

सती हल नही मिल रहा था, फिर क्या करती ? त्रिशूल लिया और नदी ओर शृगी को जोत दिया । यह सच है कि जोडी ठीक-से जुडती नही है, पर कम-से-कम डेढ बैल का काम हो ही जाता है ।

शृगी अरे-रे, यदि मेरे दो सीग होते तो क्या ही अच्छा होता ? पर मा, तुमसे जो बात मै कह रहा था, वह तो अधूरी ही रह गई । उन रति-मन्मथो ने हमारी नई फसल रौद डाली ।

सती कौन मदोन्मत्त है ये ? कही ये गधर्व और किन्नर तो नही ? मद्यपान से उन्मत्त होकर, ऐसा ऊधम उन्हे छोडकर और कोई नही मचायेगा । गाने की ताने भरनेवाले इन गधर्वो को इसका भान भी नही रहता कि अपने पैरो तले वे फसल कुचल रहे हैं । वे गधर्व ही हैं, इसमे सदेह नही । इस पगले को वे मन्मथ लगे । यह जिसे भी चमकीले और भडकीले कपडे पहने देखता है, उसी-को मन्मथ कहने लगता है ।

शकर हा, वे गधर्व ही होगे । पर इतने गधर्व ओर किन्नर आज जा कहा रहे है ?

शृगी वे हिमालय की तलहटी से नीचे की ओर जा रहे है । मा जब पहली बार यहा आई थी और जिस मार्ग से लौटी थी, उसी मार्ग से वे भी जा रहे है ।

शंकर **(सती से)** याने, क्या वे सब तुम्हारे मायके जा रहे है ?

सती मेरे मायके ? मेरा मायका ? देव, मेरा मायका है, यह मैं बिल्कुल भूल ही गई थी । मेरा मायका है ? मुझे पिता के राज्य की याद आती थी, पर वह मेरा मायका है, यह कभी मेरे ध्यान मे

ही न आया था। मेरी मा वहा है। देव, मेरी मा वहा है। मेरी मा मेरी याद करती होगी। पर मुझे उसकी याद नही आई। मुझे पिताजी का ऐश्वर्य याद आता है। पर मुझे यदि मा की याद आती, तो ? देव, मुझे यदि मा की याद आती, तो क्या होता, क्या यह आप बता सकते है ?

शकर कैसे बता सकता हू ! मेरे कोई मा ही नही ।

शृंगी वाह देव, आप यह क्या कह रहे है ! मा कैसे नही है ? यह मा जो है, हम लोगो की ।

शकर अरे पगले, यह तेरी मा है।

शृंगी फिर देव के क्या कोई मा है ही नही ? नही, मा के बिना जीना व्यर्थ है । अभीतक हम सिर्फ मारे-मारे फिरते थे। देव हमेशा समाधि-मग्न रहते थे। पर तुम्हारे आ जाने से हम कितने सुखी हो गए है, मा। तुम्हीने हमे अनाज बताया, नही तो हम पत्ते और जडो से पेट भरा करते थे। तुम्हारे आने से पहले किसी को यह चिंता न थी कि हमारा पेट भर गया है या नही। सोने के लिए हम कही भी पडे रहते थे । तुम जिस तरह आज हमारे कृष्णाजिन बिछा देती हो, वैसा पहले कहा होता था ? हम धूप मे घूमते थे । पर कोई हमे छाया मे नही बुलाता था, जैसे कि अब तुम बुला लेती हो । बेचारा नदी दिन-भर घूमकर चरता था। अब वह मजे मे एक जगह बैठा-बैठा घास खा रहा है। उसकी कितनी शान बढ गई है। अहा-हा, मा तुमने हमे नया ससार दिखा दिया। देव, क्या सचमुच तुम्हारी मा नही ? मन्मथ यदि अब मिलेगा तो उससे तुम्हारे लिए एक मा ला देने को कहूगा।

सती मा देना मन्मथ का काम नही है । नही बेटा, मन्मथ यह नही कर सकेगा ।

शृगी पर उसीने तो तुम्हे हमारी मा बनाया है न ?

शंकर मन्मथ ने मेरी हृदयेश्वरी को मेरे हृदय से निकालकर सामने खडा कर दिया । आओ-आओ प्रिये, एकाएक तुम ऐसी खिन्न

क्यो हो गई ?

सती देव, मेरी मा । मेरी याद मे वहा आसू बहा रही होगी । पर मैं कितनी दुष्ट हू ? मा, तुम्हे मैने बिल्कुल भुला दिया । मा तुम क्या सोचती होगी ? यदि ऐश्वर्य मे झूमती हुई तुम्हे मैं भूल जाती तो तुम्हे इसका कुछ न लगता । परतु इस चिंता से कि यहा हिमालय मे मै सुख मे हू या दु:ख मे, तुम्हारी आखो का पानी थमता न होगा । मा, कही तुम्हे यह तो न लगता हो कि मेरी दरिद्रता तुम्हे न दिखाई दे, इसीलिए मैने सदा के लिए तुमसे सबध छोड़ दिया हे ? मेरी प्यारी मा, तुम्हारे मन को कही यह शका तो स्पर्श नही कर गई कि तुम्हारी बेटी जीवित है या मर गई ? अथवा मेरे विरह से तुम नही-नही, ऐसी अशुभ कल्पना . , देव, क्या मेरी मा से आप एक बार मेरी भेट करा देगे ?

शकर अरे-रे, मैं कितना अभागा हू । यदि मेरी मा होती तो मैं इसके दु ख मे हाथ बटा सकता । देवि, मा का विरह क्या मेरे सहवास मे भी तुम्हे दुस्सह हो रहा है ?

सती देव, मेरे विरह से आपको कैसा लगेगा ?

शंकर नही-नही, विरह की बात ही मुह से मत निकालो । तुम्हारे विरह से ससार का प्रलय हो जायगा । तुम्हारे विरह से यह समूचा ब्रह्माण्ड लडखडाकर गिर पडेगा । तुम्हारे विरह से इस शकर का कोपानल भडक उठेगा—असख्य विश्व चकनाचूर हो जाएगे । तुम्हारे विरह से क्या होगा, यही बताना कठिन है ।

सती इससे करोड गुना मुझे अपनी मा का विरह लग रहा है । देव, मेरी मा, मेरी मा ?

शृगी मा, रोओ नही, रोओ नही ।

सती यदि मै चली जाऊ, तो तुझे कैसा लगेगा शृगी ?

शृगी ऐसी कोई बात ही मत करो मा, यदि तुम न होगी, तो हम लगातार रोते ही रहेगे ।

सती इससे हजारो-लाखो गुना मुझे मा का विरह लगता है । देव, मेरी मा, मेरी मा ।

शृगी मा, रोओ मत, रोओ मत ।

सती यदि मैं चली जाऊ तो तुझे कैसा लगेगा बेटा ?

शृगी ऐसा मत कहो मा । यदि तुम नही होगी तो मुझे लगातार रोते रहना पडेगा ।

सती सुन लिया देव ? मा के विरह का यह साधारण लक्षण है, लगातार रोते रहना । पर मैं तो लगातार हँसती ही रही थी । अब जब याद आई, तब कही दो बूद आसू टपके। देव, मा के विरह से हृदय फटकर मेरे अश्रु नही गिरे, मेरे अश्रुओ ने हिमालय के रूखे पत्थरो को नही पिघलाया । देव, मेरी अश्रु-धाराओ ने आपके शरीर के ये प्राचीन भस्म के पुट नही धोये । नही, मेरे आसू न पोछिये। विस्मरण की कृतघ्नता को धो डालने के लिए ही कम-से-कम इस हृदय का आश्रय लेकर मुझे यथेष्ट रो लेने दीजिए । **(शकर के हृदय पर मस्तक रखकर रोने लगती है ।)**

शकर शृगी, तू यहा से जा और मन्मथ को कही से खोजकर ले आ । जा ।

शृगी मन्मथ को मैं अब कहा खोजू ? मुझे वह कहा मिलेगा ? चलो, उन गर्दभो या गधर्वो से ही पूछू। **(जाता है ।)**

शकर शात, प्रिये, शात हो । तुम यह क्या कर रही हो देवि ? सदैव आनन्द की लहरो से मेरे समाधि-मग्न मन को भी प्रफुल्लित कर देनेवाला तुम्हारा यह मुखमडल यदि इस प्रकार म्लान हो गया तो मैं भी रो पडूगा । देवि, तुम्हारे आनद पर ही मेरा अस्तित्व निर्भर है। यदि तुम्ही इस प्रकार रुदन करने लगोगी, तो मेरी क्या स्थिति होगी ? मैं क्या करू ?

सती आप भी रुदन कीजिए, देव । मेरे दु ख को वटाने के लिए आप केवल दो आसू ही गिरा दीजिए। फिर मेरे आसुओ के प्रवाह मे उन्हे मिलाकर, एकरूपता के दु ख का सुख हम दोनो ही प्राप्त करें। रुदन कीजिए देव, कम-से-कम मेरे लिए तो थोडा रोइये ।

शकर (स्वगत) अब क्या करू ? जब मैं जानता ही नही कि मा का

विरह कैसा होता है, तब मैं रोऊं कैसे ! मा का ही क्यो, मुझे तो किसी के भी विरह का कोई अनुभव ही नही हुआ अभी तक ।

सती यह क्या देव, आपकी आखो मे अभी तक आसू नही ? मेरे दु ख का आपके मन पर क्या कोई प्रभाव नही पडा ? क्या इतने शीघ्र मैं आपके मन से उतर गई ? ठीक है, जब मैं नही आई थी, उस समय आप जिस प्रकार पत्थर की तरह स्वस्थ बैठे रहते थे, उसी प्रकार बैठे रहिए अब भी । मैं ही पगली हू । मैं क्या जानती थी यह ? मेरा आनद आपको अच्छा लगता है और दु ख ? वह आपको अच्छा नही लगता । क्यो, यही न ? यह सब आपका स्वार्थ है । ऐश्वर्य को ठुकराकर मैं क्या इस-लिए आपके पास आई कि आप मेरे दु ख मे दुखी न हो । मुझे देखते ही आप पागल से भी अधिक पागल बने, मेरे लिए पिताजी के द्वार पर जाकर आपने अपमान सहा, मेरे लिए भिखारी बने, मेरे लिए अपनी प्रिय समाधि भूल गए, मेरे लिए नाचे, मेरे लिए हँसे, लगातार हँसते रहे—पर आज मेरे लिए दो आसू भी आप नही बहा सकते !

शकर यह कैसी पगली जैसी बाते कर रही हो, देवि ? मुझे दु ख का कभी सम्पर्क ही नही हुआ तो मै रोऊ कैसे ? आनदाश्रुओ को छोडकर और किसी भी प्रकार के अश्रु मैं नही जानता ।

सती तो मेरा दु ख देखकर खूब आनन्द मानकर ही कम-से-कम दो आसू बहा दीजिए । दु ख नही जानते न ? तो आपको अब दु ख जान लेना चाहिए । इसके लिए कम-से-कम मुझे ही मृत्यु आ जाय । आप ससार के सहार-कर्ता हैं न ? तो मेरा सहार कर दीजिए और फिर रोइये ।

शकर **(सती के मुंह पर हाथ रखकर)** कैसा पागलपन है यह ! मेरा सहार-कार्य तुम्हारे सहार के लिए नही । तुम्हारे आनद से ही मुझे जगत के सहार मे सहायता मिलेगी । पर देवि, आज तुम्हारे मस्तिष्क मे यह कौन-सी चामत्कारिक तरग उठ पडी है ?

सती क्या आपइसे तरग समझ रहे है ? यह तो अच्छा हुआ, जो आपने इसे मेरा ढोंग नही कहा । इधर मेरा हृदय विदीर्ण हो रहा है और आपको यह मेरी तरग लग रही है ! आप अपने पर से जग को पहचानते हे । जैसे आप लहरी हैं आपको लगता हे कि दूसरे भी आप जैसे ही सनकी हैं । हटिये भी देव, अव मै आपसे कभी न बोलूगी । (जाती है ।)

शकर (स्वगत) अव क्या करू ? क्या पीछे-पीछे जाऊ ? पर वह फिर रूठ जायगी । आज इसे यह हो क्या गया हे ! आज ही कैसे इसे मा की याद हो आई ? दक्ष के यहा कोई चामत्कारिक घटना तो नही हो गई ? सदा आनदित रहनेवाली इसकी वृत्ति आज ही एकाएक भौचक्की-सी क्यो हो उठी ! खैर रूठ गई है तो रूठने दो । आज यह एक नया ही आनद मैने अनुभव किया । उसका रूठना कितना प्रिय लगता है ! पहले तो खूब हँसी । बाद मे रो पडी । फिर रूठ गई और अव रूठकर चल भी दी । मुझे इसी मे आनन्द आ गया । अहा-हा ! यदि इसी प्रकार रोज रूठे तो क्या ही आनन्द आये ! वह मुझसे रोने को कह रही थी, पर मुझे मन-ही-मन आनद की गुदगुदी हो रही थी । यह आज एक नया अवतार ही हुआ हे । अत्यानद की यह एक नई सृष्टि निर्मित हुई, जिसका अनुकरण आगामी ससार के पति-पत्नी करेगे, इसमे सदेह नही । धन्य है ससार और धन्य है उस ससार के पति । आओ, आओ, सव पतियो, आओ, यह नवीन पाठ सीखो । इस मधुर स्थिति की कल्पना मन्मथ भी न कर पाता ! नही, अव मै उसे बिल्कुल मनाऊगा ही नही । इसी तरह रूठने दो । सवेरे हाल ही मे विकसित हुए रक्तकमल की तरह अपनी सती के मुखकमल का चितन करता हुआ मैं इसी प्रकार बैठा रहूगा । अव मैं भी रूठूगा । अहा-हा ! कितनी सुन्दर कल्पना है ! अव मै भी रूठूगा और जवतक वह मुझे स्वय नही बुलायगी, तवतक मै उसके पास नही जाऊगा और एक शब्द भी उससे न बोलूगा । उस अवतार को देखने के लिए

इस समय यदि मन्मथ होता तो बडा आनन्द आ जाता ! (**मन्मथ को साथ लेकर शृगी का प्रवेश**)

शृगी देव, ये आ गए मन्मथ ।

मन्मथ महादेव की जय हो !

शकर वाह शृगी ! तूने बिल्कुल आज्ञा के अनुसार तुरत ही काम कर दिया ।

शृगी नही-नही, देव, इन्हे मै नही लाया । यह स्वय ही आ रहे थे । मैंने इन्हे लाने मे सिर्फ शीघ्रता की ।

मन्मथ और मैं भी देव, आपको शीघ्रता करने के लिए ही आया हू । दक्ष के घर आज क्या हो रहा है, इसका पता चला आपको ?

शंकर मुझे भी यही लगा कि वहा कुछ-न-कुछ अवश्य हो रहा होगा, अन्यथा सती का मन अचानक इतना व्याकुल न हो उठता । शृगी, तू जा और देखकर आ कि सती कहा है । (**शृगी जाता है ।**)

मन्मथ क्या सती का स्वास्थ्य बिगड गया ?

शंकर हिमालय पर किसी का स्वास्थ्य नही बिगडता । सती को अपनी मा का स्मरण हो आया और उसके कारण उसका मन व्यग्र हो उठा है ।

मन्मथ स्वाभाविक ही है । यह मालूम होने पर कि पिता के घर एक बडा समारोह हो रहा है, ससुराल मे किस लडकी का मन स्वस्थ रहेगा ?

शकर क्या कहा ? क्या दक्ष के घर कोई समारोह हो रहा है और उसका हमे पता तक नही ? सच, कितना पागल हूं मैं ! सती का कन्या-दान करते समय दक्ष ने जो कहा था, वह मैं बिल्कुल भूल ही गया ! मन्मथ, दक्ष के समारोह से मेरा कोई सबध नही ।

मन्मथ आपका न हो । पर सती का तो वह मायका है न ?

शंकर : चुप रहो । उस शब्द को मुह से भी मत निकालो । उस शब्द के कारण कुछ समय पहले मुझे कितने क्लेश हुए ! नहीं, मन्मथ, क्लेश हुए थे अथवा होनेवाले थे, परतु बाद को जब वह रूठी

तब—अहाहा ! उस रूठने का स्मरण होते ही मेरा हृदय नृत्य करने लगता है। मैं चाहता था कि तुम भी वह रूठना देखते। इसीलिए मैंने तुम्हारी याद की थी। कितना मधुर प्रसग था वह !

मन्मथ मानिनी स्त्रिया जब रूठती हैं, तब अभिमानी पुरुषो की मन:-स्थिति का कहना ही क्या ! देव, पत्नी के रूठने से आपको जितना आनद हुआ, उतना मुझे नही होगा, क्योकि मेरी रति रूठने की ही मूर्त्ति है। यदि वह रूठे नही तो उसे सौन्दर्य ही प्राप्त नही होता। दक्ष के यहा आजकल जो बडा समारोह हो रहा है

शकर मेरा उससे कोई सबध नही। वहा का उत्सव छोडकर तुम यहा क्यो आये ? मुझे लगता है कि यहा आते-आते तुम्हीने इस समाचार के स्फुलिग यहा के वातारवण मे फेंक दिए। अब सती को यदि यह समाचार मिला, तो क्या होगा, भगवान जाने ! और फिर उसकी आज की मनोदशा—नही-नही—तुम न आते तो बहुत अच्छा होता !

मन्मथ (स्वगत) इसीलिए तो मैं आया हू। (प्रकट) पर देव, जहा प्रत्यक्ष महादेव का अपमान करने के लिए ही यज्ञ हो रहा है, वहा मैं भी आखिर कैसे रहू ? प्रलय का विनाश करके सृष्टि को अनत बनाये रखने के लिए यदि दक्षप्रजापति ने यज्ञ आरभ किया है तो वह मुझे कैसे अच्छा लगेगा ? किसी की भी गति को जब अबाधित हुई देखता हू, तब देव, मुझे बडा दु ख होता है। इसीलिए तो आपके प्रति मेरी इतनी भक्ति और श्रद्धा है। आप है, इसीलिए सहार है, और जहा सहार होना होता है, वहा पहले से ही मैं उपस्थित रहता हू। इसलिए कहता हू, देव, सहार का ही सहार करने के लिए जब दक्ष तैयार हो गया है, तब सहारकर्ता को इसका पहले समाचार देना क्या मेरा कर्तव्य नही ?

शंकर परतु इस कर्तव्य का पालन करते समय तुम दक्ष का विरोध करने की अपेक्षा उसकी सहायता कर रहे हो। इस समाचार

का पता लगने पर सती दक्ष के कान उमेठना चाहेगी और इसके लिए यदि वह यहा से चली गई तो—मन्मथ, वह यहा से चली गई, तो ससार का प्रलय हो जायगा ।

मन्मथ प्रेम आपसे ऐसा कहलवा रहा है । मैं सोचता हू, सती के मन पर इसका कोई विशेष प्रभाव नही पडेगा । इसका यदि किसी के मन पर प्रभाव पडता है तो आप ही के मन पर पडेगा ।

शकर मुझपर क्या प्रभाव पडेगा ? जाकर कह दो दक्ष से कि करदे सहार का नाश । इसमे मुझे आनद ही है, क्योकि सहार का सहार हो जाने के बाद सहार-कार्य की अपनी वह अज्ञात शक्ति मैं सती की आराधना मे लगा दूगा और दक्ष के ही दाक्षायणी से अनतकाल तक उसके मधुर सहवास मे आनदपूर्वक दिन व्यतीत करूगा । पर मन्मथ, यह समाचार पाने पर सती स्वस्थ रहेगी, ऐसा मुझे नही लगता । मेरा क्या ? मैं ठहरा एक भिक्षुक ! अधिकार की मैने कभी अपेक्षा ही नही की । इसलिए वह अब मेरे पास से चला जाता है, तो उसका मुझे यदि कोई दु ख नही । परतु सती अवश्य इस दृष्टि से नही सोचेगी । मेरा सारा अभिमान स्वय लेकर उसे अपने अभिमान मे मिलाकर उसने अपने मे आत्मसात कर लिया है । इस द्विगुणित अभिमान के बल से वह दक्ष को सकट मे ले आयेगी । कृपाकर तुम जैसे आये हो, उसी प्रकार अब लौट जाओ । यदि भृगी ने तुम्हारे आगमन का समाचार उससे कह दिया हो, तो भी कोई आपत्ति नही । मैं उसे किसी प्रकार समझा लूगा । पर तुम अब जाओ, जाओ ।

मन्मथ पर मेरे साथ रति भी तो आई है यहा ।

शकर वह कहा है ?

मन्मथ उसकी सती से अबतक कदाचित भेट भी हो चुकी होगी ।

(भृंगी प्रवेश करता है ।)

भृगी देव, मा का तो कही पता नहीं ।

शंकर धोखा हो गया ! रति को साथ लेकर वह निश्चय ही अपने

मायके चली गई। मुझसे बिना कुछ कहे—बिना पूछे—मेरी अनुमति लिये बिना ही वह चली गई !

मन्मथ : हा, यह हो सकता है, देव। कहते है कि मायके का आकर्षण बडा विलक्षण होता है।

शकर : भृगी, खडा क्या है ? भाग-भाग जल्दी—और नदी को तैयार करके अतिशीघ्र ले आ। (भृगी जाता है।) अरेरे ! अब क्या होगा, कौन जाने ? चाडाल, मेरे सुख के समाधान मे विष घोलने तुम्हे यहा किसने भेजा ? क्या दक्ष ने ?

मन्मथ नही देव, मै अपने ही मन से आया हूं। अरेरे, मुझे यहा आने की यह कैसी कुबुद्धि सूझी !

शकर चलो मन्मथ, पहले सती से मिले। यदि वह न मिली तो—नही नही—वह अशुभ विचार ही चलो ! (जाते है।)

दृश्य चार

(रति और सती)

सती जितनी भूल कर चुकी, उतनी बस है। मै अब तुम्हारी बिल्कुल नही सुनुगी।

रति तुमने भूल की कहा ? अपने ही घर तो जा रही हो। अपने घर जाने के लिए पति की अनुमति की क्या आवश्यकता ? यदि ऐसी छोटी-छोटी बातो के लिए पति की अनुमति लेनी पडे, तो दोनो मे एकता ही कहा रही ? मै मानती हू कि मन दो है, पर वे अब एक जो हो गए है। दोनो के एक हो जाने पर परायेपन का भाव तुम्हारे मन मे आता ही क्यो है, इसीपर मुझे आश्चर्य होता है।

सती एक हो जाने के कारण ही मुझे परायेपन का स्मरण होता है। परायेपन का स्मरण हुए बिना दोनो मे एकता कैसे रहेगी ? इसीलिए मुझे अब लग रहा है कि मेरी भूल हो गई। पगली रति, कम-से-कम तुम्हारे सामने तो यह प्रश्न खडा नही होना चाहिए था। क्या मन्मथ का मन इसी प्रकार सभाल रही हो

तुम ? अब क्यो गर्दन झुका ली ? यदि तुम इस प्रकार बिना अनुमति के चल दी होती, तो मन्मथ को क्या लगता ? बिना उससे पूछे चल देने के कारण उसे जो दु ख होता, उसका तुम्हारे मन पर क्या प्रभाव पडता ? बताओ—अब तो समझ गई न ?

रति यह सच है। पर मानलो, तुम उनसे अनुमति लेने गई और उन्होने वह न दी, तो ?

सती ऐसा कभी होगा ही नही। यह क्या दक्षप्रजापति का राज्य है ? यह कैलास है। समझी ? तुम्हारी शका बिल्कुल निराधार है। अकारण तुम्हारी बातो मे आकर, व्यर्थ ही मैं देव की अवज्ञा कर रही थी। चलो, अब पीछे लौट चलें।

रति अब यह तुम्ही सोच लो। कम-से-कम मुझे तो ऐसा नही लगता कि महादेव तुम्हे जाने की अनुमति देंगे।

सती तुम्हे जैसा लगता है, उस प्रकार का बर्ताव करने के लिए न तुम दक्ष हो और न मैं कश्यप। दक्ष की चापलूसी करने के लिए चाहे जिस प्रकार नाचनेवाले मनुष्य मैंने देखे हैं। उनसे मुझे घृणा होती थी। इसीलिए तो मैं कैलास आ गई। कैलास के स्वतत्र वातावरण मे तपस्या करनेवाली यह सती अपने कल्याण के लिए भी किसीकी भीगी बिल्ली होकर नही रहेगी।

रति क्या शकरजी की भी नही ?

सती अरी पगली, वे क्या कोई दूसरे हैं ?

रति पर थोडी देर के लिए मान लो कि उन्होने तुम्हे जाने की अनुमति नही दी तो फिर भी क्या तुम अपनी स्वतत्रता पर डटी रहोगी ?

सती हां-हा-हा। पर रति, यह विचार ही मन मे मत लाओ। देव का प्रेम इतना विकारमय नही। वह अब तुमसे क्या लाज करू ? मेरे आनद और समाधान के लिए वह मुझे उच्चासन पर बिठा देते है और मेरे सम्मुख किसी नर्तक की तरह नृत्य करते हैं। पिताजी के घर मुझे बार-बार नृत्य-सगीत सुनने को मिलता था न ? उसी अभाव की पूर्ति के लिए देव का यह सारा ठाठ

रहता है। अब तुम्ही बताओ, जो मेरे आनद के लिए मेरे सामने नाचते-गाते भी हैं, वह मुझे तुम्हारे साथ मायके क्यो नही जाने देंगे ?

रति यह कौन कह सकता है ? ये हैं पुरुष। कब किस तरह पलटी खा जाय, इनका कोई ठिकाना नही।

सती . यदि वह मुझ अकेली को नही जाने देना चाहेंगे, तो उन्हीको साथ ले जाऊगी।

रति प्रत्यक्ष के लिए प्रमाण की क्या आवश्यकता ? इतनी देर हो गई। हम आधे से भी अधिक हिमालय उतर आईं। पर उन्होंने अभीतक तुम्हारी कोई खोज-खबर भी नही ली।

सती ऐसा क्यो कहती हो? देखो उधर—स्वय महादेव ही आ रहे हैं। (शकरजी और मन्मथ आते हैं।)

शकर सती—सती! क्या इस भिखारी को छोडकर तुम मायके जा रही हो ?

सती नही देव—मैं जा रही थी—पर अभी लौट रही हू। रति की बातो में आकर मैं यहातक आ गई थी। पर देव, आपके प्रेम की डोर ने मुझे पुन खीच लिया।

मन्मथ (स्वगत) अब खीचा-तानी शुरू होगी।

शकर . मन्मथ, देखा तुमने ? अब तो कम-से-कम तुम्हे विश्वास हुआ न ?

मन्मथ हा देव, अब मुझे विश्वास हो गया कि मायके का प्रेम जब जोर से खीचने लगता है, तो पति के प्रेम का खिचाव एक क्षण-भर ही उसका निरोध करता है।

सती देव, मैं अब मायके जाऊगी।

शकर मायके जाऊगी!

सती यह कैसा विनोद ? मेरे ही शब्दों को आप क्यों दोहराते हैं ? क्या आप मुझे पगली समझ रहे हैं ?

शकर नही, मैं ही पागल हो गया हू। प्रिये, तुम्हें कल्पना भी है कि तुम क्या कह रही हो ?

रति — यह कैसा प्रश्न ? यदि सती मायके जाने को कह रही है तो कौन-सा बडा सकट आ गया ?

शकर — रति, यह सचमुच एक बडा सकट है ।

रति — यह जाति का गुण है ! पत्नी के जरा-सा भी कुछ मागने पर ये अभिमानी पति एक-न-एक अडगा पैदा कर देते है ।

सती — देव, पिताजी के घर एक बडा यज्ञ हो रहा है ..

शकर — (स्वगत) पिताजी के घर ?

सती — रति कहती है कि ऐसा यज्ञ आज तक कभी नही हुआ .

शकर — (स्वगत) सचमुच नही हुआ । प्रलय के सहार के लिए—

सती — सुनिये देव, रति कहती है कि उस यज्ञ के लिए जग के सब बडे-बडे ऋषि, देव, गधर्व, अप्सराए और उनके सारे परिषद्गण एकत्र हुए है । सारी नगरी उत्सव के आनद-सागर मे डूबी हुई है । ऋत्विजो के स्वाहाकार से प्रचड यज्ञ-मडप गूज उठा है । धन और रत्न दान से असख्य याचक सतुष्ट किये जा रहे है । सर्वत्र नृत्य, सगीत और वाद्यो की लगातार धूम मची हुई है । यज्ञ-पशुओ की करुण चीखो मे याचको के आशीर्वाद मिल जाने के कारण करुण और हास्य, दोनो रस एक ही स्थान मे आ गए है । यह सब देखने का अपूर्व अवसर मै हाथ से न जाने दू, इसलिए जानबूझकर रति यहा आई है ।

शकर — शायद दक्ष ने ही उसे यहा भेजा होगा ।

सती — हा । पिताजी ने ही तुम्हे यहा भेजा है न ? मन्मथ, अब बोलते क्यो नही ?

मन्मथ — कितना विलक्षण प्रश्न है यह ? सती, प्रजापति को तुम्हारा स्मरण भी नही रहा है । जब वह यह स्मरण करते होगे कि उन्हे क्या-क्या भूल जाना है, तभी उन्हे शायद तुम्हारा स्मरण होता होगा !

सती — पिताजी भूल गए होगे । पर रति, तुम्हे मा ने भेजा है न ? देखिये देव, पिताजी का इतना क्रोध है, फिर भी उनके अनजाने मा ने मुझे बुलावा भेजा !

रति — नही ।

सती क्या मा ने तुम्हे नहीं भेजा ?

रति नही। हम अपने मन से ही आये है। वहा इतना बडा समारोह हो रहा है और तुम उसे न देखो, इसका हम दोनो को बुरा लगा और .

शकर सुन लिया देवी ? दक्ष के अनुचरो को भी तुम पर दया आवे, ऐसी तुम्हारी स्थिति हो गई है !

सती बुलावे की ही क्या आवश्यकता है ? अपने घर जाने के लिए किसीको मुझे निमत्रण भेजने की आवश्यकता नही। मैं कोई परायी नही। मा ने सोचा होगा—'मेरी लडकी है, मायके मे यज्ञ हो रहा है, उसे निमत्रण क्यो दू, उसका घर है। यह समाचार पाते ही कि मायके मे उत्सव हो रहा है, वह स्वय दौड कर आ जायगी।' कदाचित वह मेरी परीक्षा ले रही होगी। है न मन्मथ ?

मन्मथ हा। यह भी हो सकता है।

शकर प्रिये, तुम सोचती हो कि तुम्हारे जैसे ही जग के सब लोग है। पर क्या जग ऐसा है ? मैं मानता हू कि अपने स्वजनो के घर बिना बुलाये जाना अनुचित नही है। परतु यह उसी समय ठीक होता है जब उन स्वजनो मे आस्था और प्रेम हो। यहा आस्था तो है ही नही, यह मन्मथ के कहने से ज्ञात हो ही गया और प्रेम ?

सती देव, मा का अपनी बेटी पर प्रेम न हो, ऐसा कभी नही हुआ है ?

शकर और बाप का ?

सती क्रोध तात्कालिक होता है। उस समय उन्हे क्रोध आ गया था। पर अब वह चला भी गया होगा।

शकर कम-से-कम मुझे शाप देने के समय तक तो वह नही गया था, यह निश्चित है। सती, शस्त्र-प्रहार के घाव कालातर से भर जाते है, परतु शब्द-प्रहार के घाव किसी तरह नही भरते। तुम पर तुम्हारे पिता का प्रेम होना स्वाभाविक है। परतु वह मेरा शत्रु है, यह तो तुम जानती हो न ? उसे अपनी बेटी चाहे

अच्छी लगे, परतु शकर की रानी के नाते वह तुम्हारा सदा अपमान ही करेगा ।

रति सती—सती, सुन लिया ? अब तो विश्वास हुआ तुम्हे ।

सती . यह क्या देव, क्या मैं अपने मायके भी न जाऊ, और ऐसे समय जब कि वहा एक बडा समारोह हो रहा है ? मैं इस वीरान स्थान मे भी आनद से रह रही हूं । परतु आप है जो एक दिन के लिए भी मुझे अपने घर जाकर वह आनद मनाने की अनुमति देने के लिए इतने कुडबुडा रहे है । यदि आप सोचते है कि मुझ अकेली के जाने से वहा मेरा अपमान होगा तो चलिये, हम दोनो ही चले ।

मन्मथ हा-हा । यह उपाय बहुत अच्छा है ।

शंकर क्या अच्छा है ? हम दोनो का जाना, या हम दोनो के जाने से वहा होनेवाला परिणाम ? मन्मथ, दक्ष के सहवास मे इतने दिन रहने पर भी तुम्हे उसके दीर्घ-द्वेषी स्वभाव का पता नही चला, इस पर मुझे आश्चर्य होता है ! सती का दर्शन वह कदाचित सह ले, पर यदि मैं गया तो—यदि मै गया तो भयकर युद्ध होगा ।

मन्मथ तो फिर सती को ही अनुमति दे दीजिए ।

सती हा, मैं मायके जाऊगी । हो सकता है, पिताजी के क्रोध के कारण मा ने निमत्रण न भेजा हो । क्या कर सकती है बेचारी ? पिताजी का स्वभाव ही बडा विचित्र है । पर देव, मा को क्या लग रहा होगा ? वह सोचती होगी—'लडकी आ जाय । अगर 'वह' क्रोध करेगे तो मैं उन्हे मना लूगी ।' देव, उसका ऐसा सोचना क्या वात्सल्य के अनुरूप नही ? बेचारी मन-ही-मन मेरे लिए घुल रही होगी । उसका आप पर विश्वास है । उसने अपने हृदय मे पहले से ही यह प्रबल इच्छा सजोकर रखी थी कि उसकी बेटी ऐश्वर्यशाली के घर न जाय, सो क्या इसलिए कि आगे उसे यह देखना पडे । देव, तनिक सोचिये और कृपा करके मुझे मायके जाने दीजिए ।

शकर अब तुम्हे समझाऊ भी कैसे ? अरी पगली, तुम्हारा पिता अह-कार से अधा हो गया है। अपने ऐश्वर्य के परे उसे और कुछ नही सूझता। अपने ऐश्वर्य के समर्थन के लिए वह चाहे जिस व्यक्ति का अपमान कर देगा। उसने मुझे भी कैसा शाप दिया, यह तो तुम जानती हो न ? मान लो तुम वहा गई और उसने तुम्हारा कोई आदर-सत्कार न किया—नही, तुम्हारा अपमान कर दिया, तो तुम क्या करोगी ?

सती मुझे विश्वास है कि वहा मेरा अपमान नही होगा।

मन्मथ यह तुम नही कह सकती। देव ने जो कहा है, उसे असभव नही कहा जा सकता।

रति तुम तो अपनी जाति का ही पक्ष लोगे। चलो सती, इनकी क्या सुनती हो ? तुम्हारे जाने से दक्षप्रजापति को कुछ भी लगे। पर प्रसूती देवी को इतना आनद होगा जैसे उन्हें स्वर्ग मिल गया हो !

शकर प्रसूती को आनद नही होगा, यह मैंने कब कहा ? पर दक्ष के क्रोध का क्या उपाय ?

सती दक्ष का क्रोध ? दक्ष का क्रोध लिये क्या बैठे है ? देव, क्या आप दक्ष के क्रोध से डरते है ? यदि आपकी प्रिय सती इतनी डरपोक होती तो उसे आपका पाणिग्रहण करना बिल्कुल असं-भव हो जाता।

मन्मथ उस समय तुम दोनो का जो विवाह हुआ, वह दक्ष के क्रोध के शात हो जाने से नही। सती, वह इस मन्मथ के षड़यत्र की सफलता के कारण हुआ। यदि उस समय मेरा षड्यत्र सफल न होता, तो पुन कभी भी तुम यह कैलास न देखती।

सती बस करो यह आत्मश्लाघा ! मेरा विवाह कैसे हुआ, यह तुम्हारी अपेक्षा मैं अधिक जानती हू।

मन्मथ अच्छा भई, उस समय हम तुम्हारे कोई काम न आये, यह तो निश्चित ही हो गया। पर इस समय तो मायके मे हो रहे यज्ञ का समाचार मैंने ही तुम्हें दिया न ?

सती तुम चल दिए थे महादेव की खोज में। कौन मुझमें आकर पहले मिले थे ? रति को मेरे मायके से प्रेम है। इसलिए वही मुझसे पहले आकर मिली और उसीने मुझसे वहा का हाल भी कहा।

रति (मन्मथ से) लीजिये। अब तो बन गए आप पूरे बुद्धू !

सती चुप क्यो हो गए, देव ? मै जाऊ न ? बोलिये न ? मै जाऊ ? देव, आप दयालु है। दूसरे का दु ख निवारण करने के लिए आप सदैव तत्पर रहते है। फिर अपनी प्यारी सती की यह छोटी-सी इच्छा भी क्या आप पूरी नही करेंगे ? देव, मेरे मन को देखिये। आप अनुमान से मेरे मन की कल्पना कीजिए। मेरे पिता के घर इतना बडा समारोह हो रहा है और यदि मैं वहा उपस्थित न रहू, तो मेरे मन को क्या लगेगा ? मान लीजिए मै मायके मे रहती—हँसते क्यों है—हा, अगर आप मुझे पहले कभी वहा भेजते तब न ? और यहा कैलास पर कोई उत्सव होता, तो आपको क्या लगता ?

शकर असभव बातो की मै कल्पना ही न कर सकूगा।

सती तो मेरा मायका जाना आपने असभव ही सिद्ध कर दिया ! रति-मन्मथ को देखिये, चाहे जब, चाहे जहा ये लोग जाते है, चाहे जब एक दूसरे से मिलते है, परस्पर लडते है, एक-दूसरे पर क्रोध करते है, रूठते है। पर उनके मत-भेद क्या कभी सदा के लिए बने रहते है ? कुछ बोलिये न देव ! आप अगर मौन रहते है, तो मेरा मन व्याकुल हो उठता है। मै सोचती हू विनोद अब पर्याप्त हो गया।

शकर यह क्या विनोद है ? देवी, यह मेरे अस्तित्व का प्रश्न है—यदि तुम चली जाओगी, तो मै कैसे रहूंगा ? प्राणेश्वरी, तुम इस ईश्वर की जीवन-शक्ति हो। तुम हो, इसीलिए मैं हू। तुम चली जाओगी तो—तुम चली जाओगी तो—(आखें मूद लेते है।)

सती और जब मै यहा बिल्कुल ही नही थी, उस समय ?

शंकर उस समय मै भी नही था। तुम आई, तभी मै अपना होकर तुम्हारा हो गया। दक्ष के घर मत जाओ। तुम अपना अप-

मान मह सकोगी। परन्तु मेरे अपमान मे तुम जीवित न रहोगी। मेरी यह नम्र प्रार्थना सुनो और अपना यह हठ छोड दो।

सती आपको बहाने तो बहुत मिल जाते है। अब अन्तिम बार पूछती हू कि आप मुझे जाने देते है या नही ?

मन्मथ देव, हो जाने दीजिए इनकी इच्छा पूरी। दे दीजिए अनुमति। आप क्यो व्यर्थ बुराई अपने सिर ले रहे है ?

रति जो पत्नी का हठ पूरा नही करता, वह पुरुष ही कैसा ? पत्नी क्या सवारी का नदी समझ रखा है ? जिस तरह राम खीची जाय उस तरह नदी चल सकता है अर्धांगिनी नही, देव !

शकर (स्वगत) क्या इसे बता दू कि दक्ष ने जो यज्ञ आरभ किया है, वह मेरे नाश के लिए है। नही, उसे शायद यह सच भी नही लगेगा। अथवा ऐसे काम से अपने पिता को परावृत्त करने के लिए मेरी अनुमति की भी परवा न करके वह चली जायगी। नही—इसे नही जाने देना चाहिए। यही ठीक है।

सती क्या सोच रहे है, देव ?

शकर अब सोचने के लिए बिल्कुल अवकाश ही नही रहा। हृदयेश्वरी, यह अवसर विचार करने का नही है। भले या बुरे की निष्पत्ति होने तक विचार करने का अवकाश होता है। पर जहा एक बार पक्का निश्चय ही हो गया, वहा विचार करना ही अविचार होगा। प्रिये, तुम ज्ञानमती हो। क्या मेरे इस हृदय को तुम बिल्कुल ही नही पहचान पाई ? देखो, तुम्हारे विरह की मात्र कल्पना से ही वह किस तरह काप रहा है ! अपने इस अमृतपूर्ण कोमल करपल्लव को मेरे हृदय पर रखकर देखो और उसके पश्चात जो निश्चय करना चाहो करो। क्यो ? जिस कर-ग्रहण के लिए तुम अपने प्रतापशाली पिता से लडकर चली आई, वही हाथ अब तुम्हे अप्रिय लगा ? अरेरे विधाता, सृष्टि के नियम में भी तुम्हे स्त्री जाति ने चकमा दे दिया। पत्नी के स्नेहशील सहवास के लिए पति के चाहे जो स्वार्थ-त्याग करने पर भी पत्नी मायके के लिए अपने पति का ही त्याग करने के

लिए तैयार हो जाय ? मै स्त्री होता, तो ऐसे प्रिय पति के लिए हजारो मायके ठुकरा देता ।

मन्मथ आ-हा । आप स्त्री होते तो क्या करते ! यह जानने के लिए आपको भी स्त्री ही होना पडता । स्त्री का हृदय । अरे बापरे, स्त्रियो का हृदय जानना स्त्रियो को ही असभव होता है । फिर वहा पुरुषो की क्या बिसात !

शकर सती, मैं इतना मना कर रहा हू, कम-मे-कम इसीलिए यह दुराग्रह छोड दो ।

रति लो—सुन लो सती, मायके जाना दुराग्रह होता है। समझी ?

सती क्या यह मेरा दुराग्रह है ? और आप मुझे जो जाने नही दे रहे है, यह कदाचित आपका दुराग्रह नही ?

रति यही है तुम्हारे कैलास का स्वतत्र वातावरण ! देख लो, सती । अब तो हुआ तुम्हे मेरी बात पर विश्वास ?

सती जन्म से मै ऐश्वर्य मे पली, परतु आपके प्रेम के लिए इतने बडे ऐश्वर्य का त्याग करके आपके भिक्षा-पात्र का आश्रय लिया । मखमली गद्दे भी जिन पैरो मे काटो जैसे चुभा करते थे, वही ये पैर कैलास की ठिठुरी हुई शिलाओ को कोमल मानने लगे । स्वादिष्ट पकवानो से जो जिह्वा ऊब उठी थी, वही यह जिह्वा अब लार टपका-टपका कर कद मूल फल खाने लगी है। हजारो छत्रधारियो द्वारा फैलाये गए रेशमी आतपत्रो की शीतल छाया के बिना जिसने कभी सूर्य दर्शन नही किया, वही यह दाक्षायणी आज कैलास पर खुले सिर घूम रही है । कोमल बिस्तर पर सोने की आदत भूलकर, देव, आपके भस्म-भूषित हाथ के सिरहाने पर मस्तक रख, पत्थर के पर्यंक पर शयन-सुख प्राप्त करने मे जिसने आनद माना, क्या उसे एक क्षण के लिए भी आप उसका पुराना ऐश्वर्य नही देखने देगे ?

शंकर देवी, तुम्हारा मनोभग करने के लिए विवश हो जाने के कारण मेरे मन को कितनी और किस प्रकार की यातनाए हो रही हैं, उसकी तुम अपने मनोभग की यातनाओ से ही कल्पना करलो ।

पर क्या करू ? आगामी प्रसग पर दृष्टि रखकर मुझे तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार करते नही बनती । अपने मा-बाप के कल्याण की यदि तुम्हें चिता है तो यह हठ छोड दो । चलो, अकारण ही हमारे मन को त्रास देने के लिए कारणीभूत होनेवाले इन दोनो को छोडकर, हम कही दूर चलकर बैठें ।

मन्मथ वाह, वाह, क्या खूब । सती, तुम्हारे मायके के लोग भी अब ये अपनी दृष्टि के सम्मुख नही चाहते ! चलो रति, हम भी चले । व्यर्थ इनके प्रेम मे क्यो बाधा बनें ?

रति सच तो है ! हम व्यर्थ ही इतना हिमालय चढकर आये और ऊपर से हमे ऐसी बाते सुननी पडी ! सती, बैठी रहो यही अपना स्वतत्रता का वातावरण लिये । हम अपने पराधीन-वातावरण मे ही सुखी है । चलिये, चले ।

सती (क्रोध से) कहा जा रही हो मेरी अनुमति के बिना ?

मन्मथ मतलब ? क्या हम जाये भी नही ? तुम्हें अपने पति की लाते मीठी लगती है । पर उन्हे सहने के लिए हम कोई अपने बाप से लडकर नही आये है ?

सती जिस तरह पिताजी से लडी, उसी तरह अब इनसे भी लडूगी ।

शकर नही देवी । कम-से-कम यह न करना ।

सती जिस अपने मन के समाधान के लिए मैंने पिताजी की पराधीनता को फेककर दूर कर दिया, वही मेरा पति के प्रेम के लिए भी पराधीनता के बधन कभी सहन नही करेगा । मैंने स्वतत्रता मे जन्म लिया है और आजन्म स्वतत्र ही रहूंगी ।

शकर यह क्या कह रही हो, देवी ? प्रेम की परतत्रता के लिए मैं अपनी अनादि स्वतत्रता भी खो बैठा । उस प्रेम का मार्दव तुम्हारे कठोर मन पर क्या कोई परिणाम नही करता ?

सती सपूर्ण विश्व के सारे व्यक्तियो के सब प्रकार के प्रेम एकत्र करके कोई लाकर मुझे दे दे, फिर भी अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता के आगे मै उन्हे बिल्कुल तुच्छ मानूगी । ऐसे असख्य विश्व के असख्य प्रेम-रज्जुओ से कोई मुझे बाध रखे, फिर

भी अपनी स्वतत्रता के लिए, उन सब रज्जुओ को एक झटके मे तडाक-से तोड डालने की शक्ति मेरे स्वतत्र मन मे धधक रही है। व्यक्ति स्वतत्रता के आगे मै विश्व-व्यापी प्रेम को भी अपने पैरो तले की धूल के एक कण के बराबर भी मूल्य नही देती। यह शक्ति यदि मुझमे न होती तो इतने भयकर जाज्वल्य पिता की परवा न कर, क्या आपसे मैं विवाह कर पाती ? केवल इस बात से ही मेरे मन की परीक्षा करके आपको मुझे मायके जाने की अनुमति दे देनी चाहिए थी। प्रेम के कारण यदि स्वतत्रता पर आक्रमण होता हो, तो ऐसे गदे प्रेम को मै किसी तुच्छ कीटक की तरह अपने पैरो तले कुचल डालूगी। जिस स्वतत्रता की ज्योति आज मेरे हृदय मे जल उठी है, वह जीवित-ज्योति उस ज्योति की एक छोटी-सी चिनगारी भी सारे विश्व के जाज्वल्य प्रेम को भस्म कर देने के लिए पर्याप्त है। बोलिये, मेरी स्वतत्रता पर आक्रमण करने का आपका विचार क्या अब भी बना है ?

शकर देवी, तुम्हारी स्वतत्रता का पोषण करने के लिए ही मुझे विवश होकर अपने ही विचार पर दृढ रहना पड़ता है। तुम्हारी स्वतत्रता की जितनी यथार्थ चिता मुझे है, उतनी किसी दूसरे को नही। स्वतत्रता मे ही मेरी उत्पत्ति हुई और स्वतन्त्रता के जीवन पर ही मेरा सवर्द्धन हुआ। अपनी वह जीवन रूपी स्वतत्रता तुम्हारे प्रेम के कारण मैने विसर्जन कर दी। कम-से-कम मेरे इस आत्म-त्याग के लिए तो मेरे शब्दो का तुम आदर करो।

सती ये मुह-देखे की बाते मै खूब समझती हू। आपकी अपेक्षा ऐसी बाते प्रजापति के मत्रियो के मुख से अधिक शोभा देती। मै आपकी इन मीठी-मीठी बातो से धोखा नही खाऊगी। अब अतिम बार ही पूछती हू, आप मुझे जाने देते है या नही ?

शकर अपने कल्याण के लिए, मेरे कल्याण के लिए, सपूर्ण विश्व के कल्याण के लिए तुम दक्ष के यज्ञ मे मत जाओ, यह मेरी तुमसे प्रार्थना है।

सती हृदय की कटुता मधुर शब्दो के पुटो मे नही जाती रहती। दक्ष

को तो आप दीर्घद्वेषी कहते है ? और आप ? आपका भी क्या यह दीर्घद्वेष नही ?

रति सती, जल्दी बताओ तुम चलती हो या नही ?

सती हा, मैं चल रही हू । (जाने लगती है, शकरजी आखें बद कर लेते हैं ।) आखे क्यो बद कर रहे हे ? क्या मुझे जाते हुए देखा नही जाता आपसे ? (निकट आकर) ऐसा क्यो करते है देव ? मैं जाऊगी, यह पत्थर की लकीर हे । फिर केवल 'हा' कह देने मे आपको क्या कठिनाई ह ? मै कुछ नही जानती, आपको मुझे अनुमति देनी ही होगी ।

शकर मैं कदापि अनुमति नही दूगा । मेरी दृष्टि आगे की घटनाओ पर हे । पर तुम विना आगे देखे पैर रख रही हो । मेरी आज्ञा को तोडकर यदि तुम जाओगी, तो तुम्हारा हाथ मैं इस तरह पकड रखूगा ।

सती अपनी स्वतन्त्रता के लिए प्रेम के साम्राज्य के बधनो को तोडना चाह रही, यह दाक्षायणी उस हाथ को इस प्रकार छुडाकर, इस तरह चली जायगी । (रति के साथ चल देती है।)

शकर (मन्मथ से) जाओ, तुम भी यहा से निकल जाओ । नही तो मेरी क्रोधाग्नि मे तुम्हारी आहुति पड जायगी । जाओ । (मन्मथ जाता है।) (स्वगत) हे विश्वव्यापक नारायण, होनेवाले अपमान के दुख को सहन करने की शक्ति तू ही मुझे दे । सती, सती, इस हृदयासन पर से तुम्हारा आसन क्यो डगमगाने लगा । तुम्हारे त्याग के दर्शन से मुझमे गृहस्थी के प्रति रुचि उत्पन्न हुई । तुम्हारा वह अलौकिक प्रेम अब कहा गया ? अब प्रलय-काल आयगा । नाश का विनाश ही शकर का महाप्रलय हे । और जो मेरा प्रलय वही विश्व का सहार । नही, सती नही, यह वियोग मुझसे सहा नही जाता । सती, सती इस पगले से क्या पुन मिलोगी ? मन कहता है, सती की पुन भेट नही होगी । तो फिर आगे क्या होगा ? हे विश्वरक्षक नारायण, अब आगे क्या होगा ? (परदा गिरता है।)

चतुर्थ अंक

दृश्य एक

(शृंगी और भृंगी)

भृंगी अब हम क्या करे ? मा के पीछे-पीछे हम भी आये और नगर की सीमा तक पहुच गए। मा तो भीतर चली गईं। नगर मे अब हम कैसे प्रवेश करें!

शृंगी प्रश्न तो बडा विकट है। कुछ समझ नही पा रहा हू कि क्या किया जाय ? यदि सब गणो को बुलाकर आक्रमण कर दें, तो प्रवेश-द्वार अभी खुल जायगा। पर मा क्या कहेगी ? यदि कोई मुझे यह विश्वास दिला दे कि मा को यह अच्छा लगेगा तो एक क्षण के भीतर ही मेरा यह सीग दक्ष की छाती मे घुस ही गया समझो।

भृंगी : और देव की आज्ञा ?

शृंगी : देव की हो, या मा की हो—आज्ञा एक ही होगी। देव तो रह गए दूर। पर मा के इतने निकट होते हुए भी हम उनसे भेंट न कर पावे, यह कितनी विचित्र बात है ? नदी बडा भाग्य-शाली है, इसमे सदेह नही। जब उसने देखा कि मा क्रोध से भरी हुई जा रही हैं, तब वह धीरे-से उनके मार्ग मे लेट गया। फिर मा भी विवश हो गई। उसपर बैठकर ही मा को यहा आना पडा और उसके साथ ही वह भी भीतर चला गया। अरे-रे, मेरे भी यदि दो सीग और चार पैर होते तो इस समय आनद आ जाता।

भृंगी . हा भई, मनुष्यो को भी जहा प्रवेश नही मिलता, वहा पशु सहज जा सकते हैं। केवल पशुत्व का सिक्का भर लगा होना चाहिए कि काम चल जाता है। फिर कही भी प्रवेश करने के लिए

कोई बधन नही ।

भृंगी पर अब क्या करें ?

भृंगी · यही तो मैं भी नही समझ पा रहा हू । वह देखो, मन्मथ यही आ रहा है । वह कदाचित भीतर प्रवेश करने के लिए हमारी कुछ सहायता कर सकेगा । (मन्मथ आता है ।)

मन्मथ अरे वाह ! तुम लोग भी पहुच गए यहा ? क्या तुम्हारे महादेव भी आये हैं ?

भृंगी मा के यहा आ जाने के बाद से महादेव आखें मूदकर बैठे हुए हैं । अगर हम उनसे कुछ पूछते हैं, तो उत्तर ही नही देते ।

मन्मथ · फिर तुम यहा कैसे आये ?

भृंगी मा नदी पर बैठकर अकेली ही निकल पडी थी । यह देख हम भी उनके पीछे-पीछे निकल पडे और यहा तक आ पहुचे । पर अब हम मा से कैसे मिलें ?

मन्मथ तुम्हारी पोशाक से तुम शकर के गण लगते हो । यहा तुम्हे सब पहचान लेंगे—और शकर के गणो को इस नगर मे प्रवेश करने का अधिकार नही है ।

भृंगी · तो अब तुम्ही कोई उपाय बताओ, जिससे हम भीतर प्रवेश कर अपनी मा से मिल सकें ।

मन्मथ (सोचकर) उपाय ? उपाय है, उपाय है । तुम मेरी तरह पोशाक पहन लो । द्वार-रक्षक सोचेगा कि तुम मेरे ही अनुचर हो । वह तुम्हे नही रोकेगा और फिर तुम लोग मेरे साथ भीतर चले चलना ।

भृंगी पोशाक ? पोशाक का क्या मतलब ?

मन्मथ पोशाक का अर्थ है शरीर के आच्छादन—ये कपडे आदि ।

भृंगी · मतलब ? या तुम इन आच्छादनो को शरीर से अलग कर सकते हो ? धत्तेरे की ! मैं तो अभीतक यही समझ रहा था कि यह सब तुम्हारे शरीर का ही चमडा है । बताओ उतारकर । बताओ, जरा हम भी तो देखें !

मन्मथ यह देखो—यह है सेला, यह कचुक और यह रहा किरीट ।

शृगी — अरे, तो क्या ये तुम्हारी जटा नही ? और ये जुगनू ? ये तो दिन मे भी कैसे मस्त चमक रहे है ?

मन्मथ — अजी, ये जुगनू नही । ये हीरे है, हीरे । अब क्षण भर के लिए तुम यही ठहरो । मै तुम्हारे लिए पोशाक लिये आता हू ।

शृगी — क्या आश्चर्य है ! मस्तक की सारी जटाए इतने-से ढक्कन के नीचे कैसे समा जाती है ?

भृगी — तुम तो जटा ही लिये बैठे हो, इसके भीतर तो समूचा सिर ही समा जाता है ।

शृगी — सिर को पूरा ढक देनेवाला यह छोटा-सा ढक्कन ससार पर कौन-सा सकट ला दे, इसका ठिकाना नही । इसे हाथ मे लेते ही मुझे बडा अजीब-सा लगने लगा है । क्या थोडी देर के लिए इसे सिर पर रखकर देखू ?

भृगी — क्यो व्यर्थ हाथ लगाते हो उसे । न जाने सिर पर ठीक-से बैठेगा या नही ? छोड दो उसे । कही टूट-टाट न जाय !

शृगी — अपना सिर ढाक लू क्या इस ढक्कन से ?

मन्मथ — जरा ठहरो । अब पूरी पोशाक ही तुम्हे पहनाये देता हू । (वह पूरी पोशाक उन्हे देता है । वे लोग पोशाक पहनते समय अनेक गलतिया करते है । मन्मथ उन गलतियो को ठीक करता जाता है ।) बस, अब इतना और पहन लो कि काम बन जायगा ।

शृगी — इसीकी तो मुझे भी जल्दी पडी हुई है ।

मन्मथ — (भृगी के सिर पर किरीट पहना देता है और शृगी के पास आकर) अरे, यह किरीट तुम्हारे सिर पर कैसे रहेगा ?

शृगी — क्यो भला ? भृगी के सिर पर कैसा रहा ? फिर मेरे सिर पर क्यो नही आयगा ?

मन्मथ — तुम्हारा यह सीग जो है । यह रुकावट डालता है न ?

शृगी — अरे-रे, अगर मेरे बिल्कुल ही सीग न होता, तो बडा अच्छा था ।

भृगी — तुम्हे तो बडा अभिमान था न अपने सीग पर ? अभीतक तुम्हे दो सीगो की चाह थी, परतु किरीट के पाते ही क्या तुम्हे सीगो से एकदम इतनी घृणा हो गई ?

शृगी थोडा प्रयत्न करके देखो । जरा दबाग्रो जोर से ग्राप ही ग्राप जम जायगा ।

मन्मथ ग्रौर कही सीग ही टूट गया तो ?

शृंगी मुझे कोई ग्रापत्ति नही । टूट जाने दो ।

मन्मथ ग्रौर यदि किरीट ही टूट गया तो ?

शृगी ग्ररे हा, यह ग्रवश्य एक वडी कठिनाई है । किरीट का टूटना उचित नही । ग्रब क्या करू । ग्रच्छा ठहरो । सामने की शिला पर जोर से ग्रपना सिर पटके देता हू, जिससे सीग टूट जायगा ।

मन्मथ ठहरो । ऐसा मत करो । कोई दूसरा उपाय निकालता हू । **(कमर से सेला खोलता है ग्रौर उसे सिर के ग्रासपास लपेट देता है ।)** वाह, ग्रब ठीक जमा । यही नही, वल्कि यह एक नई खोज है । जब सीग की कठिनाई बिल्कुल दूर हो गई । जिसके सिर पर सीग होने के कारण किरीट या मुकुट सिर पर न जमते हो, वे ग्रपने सीगवाले सिर पर इसी तरह दक्षिणोत्तर छोर का सेला लपेट ले, जिससे प्रतिष्ठा रह जायगी ग्रौर शोभा भी बढेगी । ग्रागामी पीढी के मुकुटधारी लोगो पर शृगी ने ये महान उपकार किये है, इसमे सदेह नही ।

शृगी चलो भृगी, उस नाले के किनारे जाकर पानी मे देखें हमारा यह वेष हमे कैसा फवता है ?

मन्मथ वेष देखने को पानी मे देखने की क्या ग्रावश्यकता है । यह लो, मै तुम्हें एक दूसरा चमत्कार दिखाता हू । **(दर्पण देता है ।)** इसमे देखो ।

शृगी यह तो केवल लकडी है ।

मन्मथ हर चीज की दो वाजुए होती है । दूसरी बाजू देखो ।

शृंगी (देखकर) ग्ररे वाह, इस पटिये पर यह पानी कैसे रुका रहा ?

मन्मथ यह दक्ष प्रजापति के घर का चमत्कार है । ग्रच्छा, ग्रब यह धनुष लो ग्रौर यह तूणीर पीठ पर लटका लो । वाह, ग्रब ठीक जमा । शृगी, ग्रब देव की तरह इस नगर की स्त्रिया तुम्हारे भी गले पडेगी ।

शृंगी : किस नाते ? अर्द्धांगिनी बनेगी या मा ?

मन्मथ : अरे पागल, अर्द्धांगिनी बनेगी। अब तुम्हें इतनी अर्द्धांगिनीया मिलेगी कि तुम्हारा अपना अग स्वय तुम्हारे ही अधिकार मे नही रह पायगा। वही सर्वांगिनी बन जायेगी।

भृंगी : नही-नही। इतना-भर मत होने देना।

शृंगी : हा। ये स्त्रिया मा के नाते ही अच्छी। अगर अर्द्धांगिनी हो गई, तो सारे शरीर को भडका देती है। हमारे महादेव की दशा देख लो क्या हो गई है। वही उनकी अर्द्धांगिनी हमारी मा होने के कारण हमारी सभी इच्छाए किस तरह बडे प्रेम से सदा पूरी करती रहती हैं। नही रे भाई, भगवान बचाये इस अर्द्धांगिनी से।

मन्मथ चलो। मैं अब तुम्हें ढककर ही ले चलता हू। (उन्हें परदा-नशीन करके ले जाता है।)

दृश्य दो

(कश्यप, प्रसूती और मायावती)

कश्यप : महारानी, मैं मानता हू कि प्रसग बडा विकट है। पर करू क्या ? प्रजापति के मन के विरुद्ध मैं कुछ नही कर सकता। ब्रह्माजी द्वारा दिये गए अधिकार का वह दुरुपयोग कर रहे हैं, इसमे सदेह नही और अधिकार के इस अतिक्रमण का प्रायश्चित उन्हे भोगना ही होगा।

माया पर तुम उन्हें अधिकार का अतिक्रमण करने ही क्यो दे रहे हो ?

कश्यप मैं कर ही क्या सकता हू ? जिस तरह तुमने उपदेश की दो बातें उनसे कही, उसी तरह मैंने भी उन्हें समझाया। परतु जहा दुराग्रह चरम सीमा पर पहुच चुका है, वहा उपदेश का क्या फल ?

प्रसूती पति-निन्दा सुनना ही मेरे भाग्य मे बदा है, यही सच है। परतु सत्य सदा सत्य ही रहेगा। तुम उनकी निंदा न करो, इसलिए

अधिकार के बल पर, बहुत हुआ तो मैं तुम लोगो का मुह बन्द कर दूगी । पर ससार का मुह कैसे बन्द करूगी ?

माया क्यो ? अधिकार के बल पर ससार का मुह भी बद हो सकता है ।

प्रसूती पर मन ? योगिनी, ससार के मन पर किसी भी प्रजापति का शासन नही चल सकता । सारे विश्व को महादेव के प्रति आदर है । समस्त विश्व की सहानुभूति प्राप्त करने का यद्यपि महादेव ने कभी कोई प्रयत्न नही किया

माया . इसीलिए तो सारा विश्व उन्हें महादेव कहता है । मन की सर्व-व्यापकता को विश्व के अस्तित्व के साथ तादात्म्य करके वह सबके कल्याण की निरतर चिन्ता करते रहते हैं, इसीलिए उन्हे शिव कहते हैं । दैवयोग से ये शिव तुम्हारे दामाद हुए हैं । परतु तुम शत्रु को छोडकर उनसे और कोई भी नाता जोडने को तैयार नही, इससे अधिक दुर्भाग्य और क्या होगा ?

प्रसूती पर मैं यह कहा कहती हू कि दामाद का नाता हमे भूल जाना चाहिए ।

माया तो तुमने यज्ञ को रोकने का प्रयत्न क्यो नही किया ?

प्रसूती मैं रोकने का प्रयत्न करती ? योगिनी, मैं दक्षप्रजापति की केवल छाया हू । जिस प्रकार उनकी हलचल होगी, उसी तरह मुझे भी हिलना होगा । मैं उनकी इच्छा के विरुद्ध कैसे जा सकती हू ?

कश्यप आर्य पत्नी का यह धर्म ही है । परतु पति की बुद्धि यदि भ्रष्ट हो रही हो, तो उसे उचित मार्ग दिखाना भी पत्नी का धर्म है ।

प्रसूती · कश्यप, मैं दुर्बल हू । पति के मन को तनिक भी दुखाने का धैर्य मुझमें नही । इसलिए मैं भी आखिर क्या करू ? अब यही देखो न, मैंने हर तरह से प्रयत्न करके सती को निमत्रण भेजना चाहा, पर उसका कोई उपयोग न हुआ ।

कश्यप . मतलब ? क्या तुम्हारी इच्छा थी कि सती इस यज्ञ मे आवे ? नही-नही ! महारानी, सती के इस समय यहा आने से बडा अनर्थ हो जायगा । यह देखकर कि उसके पति का अपमान

करने के लिए, नही, बल्कि उसका प्रत्यक्ष नाश करने के लिए ही यह यज्ञ हो रहा है, वह क्रोध से भडक उठेगी।

माया तब तो यदि सती आ जाय तो बडा अच्छा होगा।

प्रसूती क्या तुमने सुना नही, कश्यप ने अभी क्या कहा ?

माया हा, वह सुनकर ही तो मुझे लग रहा है कि सती आ जाय तो बडा अच्छा होगा, अन्यथा अहकार से मदान्ध हुए दक्ष को यह पता कैसे चलेगा कि विश्व मे उसकी अपेक्षा भी कोई बलवान है। सपूर्ण विश्व की पूर्णाहुति लेने के बाद ही दक्ष के यज्ञ मे विघ्न उपस्थित हो, तभी मुझे कुछ सतोष होगा।

प्रसूती ऐसी अशुभ बात नही कही जाती। पहले से ही घबराये हुए मेरे मन को और क्यो कपा दे रही हो ? बेचारा विश्व सुख मे रहे और उस विश्व के साथ ही मेरे पति का भी कल्याण हो। ऐसी अशुभ कल्पना करने के अतिरिक्त क्या तुम्हें दूसरा कोई उपाय नही सूझता ?

कश्यप अब काहे का उपाय ? यज्ञ की समाप्ति निकट आ रही है। क्या बताऊ मायावती, यद्यपि मुझे ऐसा नही लगता कि यह यज्ञ निर्विघ्नता से समाप्त हो, फिर भी मैं यह कहने का साहस नही कर सकता कि उसमे कोई विघ्न आवे। यज्ञ की पूर्त्ति से जिस तरह जगत का अकल्याण होगा, उसी तरह उसे भग कर देने से भी होगा। मेरी बुद्धि तो अब बिल्कुल काम ही नही कर रही है। अब तो जो भगवान की इच्छा होगी वही होगा।

माया यज्ञ प्रारभ कराने से पहले तुम्हारी बुद्धि कहा गई थी ?

कश्यप मेरी बुद्धि दक्ष की कक्षा मे अटकी पडी है। मायावती, कहने मे लज्जा आती है, यह सच है। पर सच बोलना ही पडता है। इसीलिए तुमसे कहता हू कि दक्ष की इच्छा के विरुद्ध जाने का साहस करने की शक्ति मुझमे नही। ब्रह्माजी की अनुज्ञा से मैं दक्ष के अधिकार के हाथ बिक गया हू। इस कारण अपने निजी मतो को स्पष्ट शब्दो मे उसे सुनाने की योग्यता अब मुझमे नही रही।

प्रसूती आज दिनभर रति और मन्मथ कहीं दीखे नहीं । क्या तुमने उन्हें किसी काम से कहीं भेजा है ?

कश्यप नहीं तो । यज्ञ के लिए जो गंधर्व और किन्नर आये हुए हैं, उनका स्वागत करने के सिवा उन्हें दूसरा कोई काम नहीं दिया गया है ।

प्रसूती वे कहीं हिमालय न चल दिए हों ?

माया यदि ऐसा हुआ हो, तो बहुत अच्छा है ।

प्रसूती योगिनी, आज तुम ऐसा क्यों कह रही हो ? आज ही तुम्हें ऐसा क्यों लगने लगा कि हमारा अकल्याण हो ?

माया पहले इसका विचार करना चाहिए कि कल्याण और अकल्याण की व्याख्या किसके मत से निश्चित की जाय । एक का कल्याण ही दूसरे का अकल्याण हो जाता है । इसलिए एक व्यक्ति के अकल्याण से यदि सारे संसार का कल्याण होता हो, तो उस व्यक्ति के अकल्याण की इच्छा मैं क्यों न करूं ? सार्वत्रिक कल्याण के आगे व्यक्ति का कल्याण मुझे तुच्छ लगता है ।

प्रसूती मन्मथ हिमालय गया भी हो, पर प्रश्न यह है कि क्या महादेव सती को यहां आने देंगे ? कश्यप, तुम्हीं बताओ । यदि सती इस समय मुझसे मिलने यहां आये, तो यज्ञ में क्या सचमुच विघ्न उपस्थित हो जायगा ?

कश्यप मुझे ऐसा लगता अवश्य है । पर कौन कह सकता है—यदि अपमान सहन करने के लिए सती तैयार हो तो कोई विघ्न उपस्थित न होगा । सब कार्य अच्छी तरह हो जायगा ।

प्रसूती तब तो वह न आये यही अच्छा । गरीब बेचारी मेरी बेटी ! वहीं सुख से रहे । यदि मुझसे भेंट न हुई तो कोई चिंता नहीं । पर कश्यप, वह अपमान कभी नहीं सहेगी । सती यदि यहां आई (रति प्रवेश करती है ।)

रति सती यहां आ गई है ।

प्रसूती हाय रे दुर्भाग्य ! सती आ गई ! कश्यप, सती आ गई ! योगिनी, सती आ गई ! अरे-रे, सती आ गई ! अब मैं क्या करूं ?

कश्यप : यह क्या खेल है ? रति कहाँ है सती ?

रति : यह देखो (सती आती है) यह पता लगते ही कि दक्ष के घर यज्ञ हो रहा है, पति की अनुमति की भी परवा न करके सती मायके दौडकर चली आई ।

सती . यह क्या मा ? तुम मेरा स्वागत क्यो नही कर रही हो ? रो क्यो रही हो ? मा, बोलो न ? रोती क्यो हो ?

प्रसूती · बेटी, यहा तू क्यो आई ? क्या हिमालय से इतने शीघ्र ऊब उठी ?

सती · मा, हिमालय से मैं कैसे ऊबूगी ? वह मेरा अपना घर जो है । कश्यपजी, मा को क्या हो गया है ? वह यह अटशट क्या बक रही है ?

कश्यप सती, यह मा का हृदय बोल रहा है । मनुष्य की जिह्वा और मा का हृदय, दोनो मे आकाश-पाताल का अतर होता है ।

सती : मा, मेरे आने से क्या तुम्हें दुःख हुआ ?

प्रसूती . हा बेटी, मुझे मरणातक दु ख हुआ ।

सती : मा, मेरे मायके मे उत्सव हो रहा है, क्या मैं उसे न देखू ? क्या अपनी प्यारी मा से कभी मिलू भी नही ?

प्रसूती : बेटी, तू आई, मुझसे मिली, तेरा मुखावलोकन करके मुझे आनन्द हुआ । परतु बेटी, मैं तुझे हृदय से तभी लगाऊगी जब तू यह स्वीकार करे कि इसी समय जैसी आई है, उसी तरह तू हिमालय लौट जायगी । यह देख, मेरे बाहु काप रहे हैं । मेरा हृदय इतना धडक रहा हे जैसे अब फट जायगा । मेरे सारे प्राण मेरी आखो मे आकर सिमट गए हैं । पर बेटी, जबतक तू तुरत कैलास लौट जाना स्वीकार नही करेगी, तबतक मैं तुझे हृदय से नही लगाऊँगी । बेटी, हा कहदे--हा, कहदे बेटी, कह दे—लौट जाऊगी, मेरी बात स्वीकार कर ले बेटी ?

कश्यप . (स्वगत) ओह, यह प्रसग मेरे विरक्त हृदय को भी कँपा दे रहा है । (प्रकट) महारानीजी, यज्ञारभ का समय हो गया है । मैं अब जाता हू । बेटी सती, यदि तुम चाहती हो कि तुम्हारे पिता दक्षप्रजापति का कल्याण हो, तो यज्ञ-मडप मे भूलकर

भी न आना, यही मेरा अतिम निवेदन है। (जाता है।)

सती . यह क्या चमत्कार है ? कश्यपजी ने जाते समय मुझे आशीर्वाद नही दिया। मेरी अनुपस्थिति मे यहा के क्या सारे आचार ही बदल गए ? योगिनी, तुम भी क्यो चुप हो ? मेरा हृदय भय से काप उठा है। रति, यह क्या बात है ? कम-से-कम तुम्ही मुझे सारा हाल बता दो। सभी क्यो चुप हैं ? कोई बोलता क्यों नही ? मा, यदि तुम इस तरह चुप रहोगी, तो मैं आखिर क्या समझू ? म.-मा यह सब क्या है ? कुछ बताओ तो। रो क्यो रही हो। हे ईश्वर, यह मैं कैसे सहन करू ? इस कल्पना से कि यहा पहुचते ही तुम मुझे जोर से अपने हृदय से लगा लोगी, मुझे मार्ग मे आनद की गुदगुदी हो रही थी। मा, बिना बुलाये भी मैं आ गई—मैंने मानापमान का कोई विचार नही किया—केवल तुम्हारे लिए, पति की अनुमति की भी परवा न कर, तुम्हारे पास दौडी आई। सोचा था, तुम आनद से खिल उठोगी, दौडकर मुझे हृदय से लगा लोगी। पर यह क्या कर रही हो तुम ? आखे खोलो ? यदि तुम ही इस तरह सिसकियो-पर-सिसकिया लेने लगो, तो क्या मेरी आखें भी नही बरस पडेगी ? मा, क्या मैं अश्रु बहाने मायके आई हू ?

प्रसूती कहा का मायका बेटी ? जा—अपने पति के घर लौट जा।

सती क्या तुमसे गले भी न मिलू ? यह कैसे होगा मा ? मेरा मन कर रहा है कि दौडकर तुमसे लिपट जाऊ। परतु तुम्हारी भुजाए फैले बिना मैं आगे कैसे बढू ?

प्रसूती पहले यह वचन दे कि आलिगन करने के बाद तू एकदम यहा से सीधी कैलास चली जायगी।

सती . मा, मैं यज्ञ देखने आई हू।

माया सती, क्या तुझे मालूम है कि यह यज्ञ किसलिए हो रहा है ?

प्रसूती . योगिनी, तुम्हें मेरे सिर की सौगध है। अब एक शब्द भी आगे मत बोलो।

सती · क्यो ? क्या मैं कोई पराई हू ?

प्रसूती हा बेटी, तू पराई से भी पराई है। मैं तेरी वैरिन हू।

सती यह कैसी ऊटपटाग बात कर रही हो तुम ? मा, तुम मेरी वैरिन कैसे हो सकती हो ? अब मेरा धीरज टूट रहा है। मा के सामने अभिमान क्या ? मान क्या ? **(जाकर उसे आलिंगन करती है)** मा-मा बोलो, बताओ आखिर बात क्या है ? मुझे बताओ न ?

प्रसूती **(उसे कसकर आलिंगन देते हुए)** दूर हो, बेटी। दूर हो। मुझे इस तरह मोह मे न फसा।

माया नौ महीने भार वहन करनेवाली मा को उसकी बेटी यदि मोह मे न फसाए, तो मानवी माया का प्रभाव ही क्या रहा ? झूटी माया—सब झूठी माया।

सती माया झूठी होगी। योगिनी, माया भले ही झूठी हो, पर उसका आवेग बिल्कुल सच्चा होता है। जगत मे यदि कुछ सत्य है, तो वह है केवल माया का यह आवेग। मा, मेरे आने से सर्वत्र यह उदासी-सी क्यो छा गई है। बताओ, मुझे सशय मे मत रखो। उधर कैलास पर महादेव क्या कर रहे होगे। उनका मन तोड-कर मैं यहाँ आई और यहा आकर देखती हू तो सभी लोगो ने मुझसे मुह फेर लिया है। मैं कैसी अभागिनी हू कि यहा आते ही मा मुझसे लौट जाने को कहे ? मा, मेरे शृगी और भृगी मुझे मा ही कहते हैं। तुम्हे छोडकर यदि मैं उनसे मिलने गई होती तो आनन्द से नाच कर वे सारा कैलास हिला देते। यह देखते ही कि मैं क्रोध से जा रही हू, बेचारा नदी पशु होकर भी दौडता हुआ मेरी खोज मे आया। मेरे उसकी पीठ पर बैठते ही उसकी आखो के आसू नही रुके। और तुम लोग तो मनुष्य हो। अरे-रे, क्या मनुष्य से पशु ही सुहृदय होते हैं। नदी जिस प्रकार दौडता आया, उसी तरह शृगी और भृगी भी। **(मन्मथ प्रवेश करता है।)**

मन्मथ वे भी आ गए है। ये देखो शृगी और भृगी।

सती कहा हैं वे ? **(शृगी और भृंगी को देखकर)** अरे, यह क्या स्वाग बना रखा है तुम लोगो ने ? **(शृगी और भृंगी सती के**

चरण छूकर) मा-मा, हमे क्यों अकेला छोडकर आ गई ?

सती उठो बेटो। पर यह क्या स्वाग बना रखा है तुमने ? मन्मथ, यह सब तुम्हारी ही करतूत दिखती है ?

शृंगी हा। मन्मथ मिल गया था। इसीलिए तुमसे भेंट हो सकी। यह भृंगी का किरीट और यह मेरा। क्यों मन्मथ, हा-हा, यह मेरा शिरस्त्राण। देखा मा, मेरा सीग अब बिल्कुल नही दीखता। अब कौन पशु कहेगा मुझे ?

सती नही बेटा, तुम पशु ही रहो---ये मनुष्य देखो---अरे-रे, मन्मथ, यदि तुम मुझे पहले ही बता देते कि मेरे आने से यहा सबकी इस तरह घुटन होगी, तो देव के मन को दुखाकर, मैं इतनी दूर कभी न आती।

मन्मथ घुटन ? पर यह घुटन क्यो ? महारानीजी, आप खिन्न क्यो हैं। आपके मन की बात जानकर मैं सती को यहा ले आया। इसके लिए आपको मुझे शाबासी देनी चाहिए।

प्रसूती मेरा मन ? प्रजापति की पत्नी के पास मन होता भी है ?

शृंगी मा ?--तुम नही---यह हैं हमारी मा---मा, अब मायका हो गया तुम्हारा। चलो, अब घर चलें।

सती मायका हो गया। मा, मेरे इन बच्चो को देखो। तुमने जिस तरह नौ महीने मुझे पेट मे पोसा है, वैसे ये बच्चे नही है, समझी ? ये मेरे भोले शकर के भोले अनुचर हैं। इन्हें देखो और अपनी बुद्धिमान और सुधरी हुई प्रजा को देखो। मा, बोलो-बोलो .

शृंगी अरे भृंगी, देखा ? मा के भी मा होती है। (प्रसूती से) अजी ओ मा की मा, कृपा करके हमारी मा को अब वापस भेज दो न ? हमारे महादेव हमारी मा के लिए वहा व्याकुल हो उठे हैं।

प्रसूती तुम्हारी मा के कारण तुम्हारे महादेव पर न जाने कौन-सा सकट आनेवाला है ? योगिनी, जो होना हो, सो हो जाय। मैं सोचती हू, तुम सती को सारा हाल साफ-साफ बता दो।

माया सती, तुम महादेव की रानी हो। यह दक्षप्रजापति का राज्य है और दक्षप्रजापति महादेव का कट्टर शत्रु है। दक्ष अहकार से इतना मदाध हो गया है कि उसे यह स्मरण भी नही रहा कि उसके शत्रु की पत्नी उसकी ही औरस बेटी है। उसने जो यह यज्ञ आरम्भ किया है, उसकी समाप्ति आज ही होनेवाली है, और आज ही तू आई है। तेरे आगमन से इन्हें आनन्द नही हुआ। मुझे भी नही हुआ। पर तू आ गई, यह अच्छा हुआ। सती, पहले मैं तुझसे प्यार करती थी, जैसे तू मेरी ही बेटी हो। परन्तु अब तू मुझे वदनीय हो गई है। हे कैलासनाथ की शक्ति-देवि, मैं तुझे प्रणाम करती हू और अपनी सारी सामर्थ्य आज मैं तेरे चरणो मे अर्पित करती हू। उसके बल से बलवान होकर, आज दक्षप्रजापति को दड दे।

सती यह क्या कह रही हो योगिनी ? तुम मुझे बडी उलझन मे डाल रही हो।

माया प्रजापति के यज्ञ मे आज शकर की पूर्णाहुति होगी। प्रलय का सहार करने के लिए ही यह दक्ष-यज्ञ हो रहा है।

सती (क्रोध से) मा, क्या तुम्हारे घर का यज्ञ यही है ? बोलो, दक्षप्रजापति क्या चाहते है ? बेटी का वैधव्य या दामाद की विधुरावस्था ? मा, दक्ष का दाव चूक गया। शकर की शक्ति मै हू। मेरी पूर्णाहुति से दक्ष-यज्ञ सफल हो जायगा न ? अब क्यो रोती हो ? बोलो मा। शकर से लडने की सामर्थ्य तुम्हारे प्रजापति मे नही। तुम कदाचित मुझसे पूछोगी—'तू तो अभी उनसे लडकर आई है ?' हा, मैं लडकर आई हूं। शकर से लडने की शक्ति शकर की शक्ति मे ही है। शकर भिखारी हैं, प्रजापति ऐश्वर्यशाली हैं। परतु मा, सारे जगत को प्रलय कर डालने की सामर्थ्य रखनेवाले ये दुर्बल देवता (**शृगी और भृंगी की ओर अंगुली दिखाकर**) उनके सहायक है। यही बे-घर-द्वार के देवता अपनी दुर्बलता के बल पर प्रजापति का सारा ऐश्वर्य निगल जायेंगे, समझी ? (**मायावती से**) योगिनी,

इन्ही दुर्बल देवताओ में तुम भी एक हो। मुझे आशीर्वाद दो, जिससे मै अपने काम मे यश प्राप्त करू।

माया : जाओ देवी—हे अखिल जगत की सहारकारिणी देवी, जाओ तुम कृतार्थ होओ। (प्रस्थान)

प्रसूती : नही, बेटी नही। ऐसा न करना। अपनी दुर्बल मा पर दया कर।

सती : मा, तुम दुर्बल नही। तुम महान् ऐश्वर्यशाली दक्षप्रजापति की रानी हो। मैं एक भिखारी की गृहिणी हू। अब तुम्हारा और मेरा सबध समाप्त हो गया। (जाती है। मूर्छित हो जाती है।)

भृंगी : ठहरो मा, हम भी आ रहे हैं।

मन्मथ : मेरी सुनो। तुम अभी मत जाओ। रति, क्या तुम डर गई? डरो नही। आगे मैं जाता हू। इन दोनो के साथ तुम यज्ञ-मडप के द्वार पर रुकी रहना और जबतक मैं न पुकारू, आगे मत बढ़ना।

रति : अब प्रलय होगा। मै तो डर के मारे मरी जा रही हू। प्राणेश्वर, कोई भयकर सकट तो नही है न?

मन्मथ : जो होगा, वह प्रत्यक्ष ही दीख जायगा—जाओ। इन्हे भी अपने साथ ले जाओ।

शृंगी-भृंगी : जय शकर। हर हर!

मन्मथ : अरे, चुप। अभी नही। इसके लिए अभी समय है। अभी बिल्कुल चुप रहो। जाओ। (जाते हैं।) (स्वगत) वाह रे मन्मथ, शाबास! अब ठीक जमा। सभी से अब बदला चुकेगा। दक्ष ने कहा—नही, फिर भी सती को शकर के गले से बाध ही दिया। अभी मायावती को यश मिल रहा था, पर मैं क्या ऐसा मुफ्त का यश उसे हजम होने दूगा? अब सती के मरने पर शकर रोयेगे बैठे-बैठे। और फिर मायावती को भी मुह की खानी पडेगी! वाह रे मन्मथ, इस त्रिभुवन मे तू ही एक धन्य है!

दृश्य तीन

(आसनस्थ दक्ष और यज्ञ-वेदी के सामने ऋत्विज आदि)

दक्ष हे ऋषियो, मुनियो, ऋत्विजो, आज वह आनद का क्षण निकट आ रहा है । सपूर्ण जगत के सब जीवो को जिसने भयभीत कर रखा है, उस सहार का विकट स्वरूप आज इस यज्ञ-कुड मे भस्मसात होगा । मृत्यु की दाढ के नीचे प्रति क्षण नाश की निरकुश राह देखनेवाले समस्त प्राणी आज आमूलाग्र निर्भय हो जायेगे । 'सहार' शब्द सृष्टि के शब्दकोश से निकल जायगा और सारे विश्व मे अनतता का साम्राज्य छा जायगा । मृत्यु का भय निकल जाने के कारण भविष्य मे अब किसीको किसी-से भी भय खाने की आवश्यकता न रहेगी । सर्वत्र समता, शान्ति और सर्वत्रता गूज उठेगी । सृष्टि और स्थिति—केवल यही दो भावनाए शेष रह जायेगी और आज नाश का विनाश हो जायगा । सबके हृदय को कपा देनेवाला प्रलय-कर्त्ता रुद्र शकर आज शक्तिहीन होकर, नष्ट हो जायगा । सारे ससार को यह स्वी-कार करना होगा कि जिसे ब्रह्मदेव भी नही कर सके, जिसका विष्णु को भी कोई ज्ञान नही और जिसके कारण शकर का कोई अता-पता भी नही रहेगा, ऐसे इस अमोघ कार्य को सम्पन्न करने का श्रेय मुझे मिल रहा है । मृत्यु का नाम ही मिट जाने के कारण कोई किसीसे निर्बल नही रहेगा । सर्वत्र बलवानो की ध्वजा फहराती रहने के कारण कोई किसी से हार नही मानेगा, कोई किसीका पराभव नही करेगा, किसीको हरा-कर कोई श्रेष्ठ नही होगा । इस प्रकार सुख की समता होते ही कलह का बीज ससार से नष्ट हो जायगा । देव और दानव का भेद भी नही रहेगा । शक्ति और युक्ति का द्वद नष्ट हो जायगा और सर्वत्र सुख और शान्ति छा जायगी । ऊपरी तौर से अस-भव लगनेवाली इस स्थिति को प्रत्यक्ष मे आई देखकर, समस्त जीव आश्चर्य-चकित हो जायगे । त्रिभुवन की निराशा अस्त

हो जायगी और दक्षप्रजापति का नाम अनत जगत के अजरामर इतिहास मे सुवर्णाक्षरो मे लिखा जायगा । जव इस भविष्यकालीन सुखपूर्ण स्थिति की कल्पना करता हू, तव मेरा हृदय भर आता हे । यज्ञ-धूम्र से पहले ही चू रही इन आखो मे आनंदाश्रुओ की वाढ आ जाती हे और यह देखकर कि शाति के साम्राज्य की अनोखी और प्रचड कल्पनाओ को वास्तविक स्वरूप प्राप्त होगा, मुझे विश्वास हो जाता है कि ब्रह्माजी ने मुझे जो यह अधिकार दिया हे, उसके लिए मैं विल्कुल योग्य सिद्ध हुआ । मुझे लगने लगता है कि मैं कृतार्थ हो गया । इस पहली आहुति के साथ **(सती प्रवेश करती है ।)**

सती शकर की यह अमोघ शक्ति तुम्हारे सामने आकर खडी हो गई है । दक्ष, यह क्या हो रहा हे ?

कश्यप (स्वगत) वस, हो चुका । प्रलय का सहार करनेवाले का ही आज विनाश होगा ।

दक्ष कश्यप, यज्ञ-द्वार का अतिक्रमण करके भिखारी यज्ञ-वेदी के पास कैसे आ सके ?

सती भिखारियो को कही कोई रुकावट नही होती ।

दक्ष यह भिखारिन यहा कैसे आई ?

सती यह भिखारिन दक्ष-दुहिता हे । यह भिखारिन शिव की शक्ति है । यह भिखारिन कृतात-कामिनी हे । प्रत्यक्ष उदयोन्मुख महादेव भी जिस भिखारिन की गति को न रोक सके, उसे रोकने की शक्ति दक्ष के ध्वसोन्मुख दरवार मे कहा से आयेगी ? यज्ञ के धुए से भरी अपनी आखे पोछकर इधर देखो । पिताजी, मैं तुम्हारी प्रिय कन्या सती हूं ।

दक्ष सती नाम की मेरी एक कन्या थी, यह सच है । परतु भूल के कारण वचनवद्ध होकर, मैंने एक पिशाच को उसकी वलि चढा दी ।

सती कम-से-कम प्रजापति को तो यह मालूम होना चाहिए कि पतिनिंदा सुनना पत्नी के लिए महा पाप है ।

दक्ष . तेरा पति तेरे लिए बहुत बडा होगा । परन्तु मेरी दृष्टि मे वह एक तुच्छ कीटक ही है । भूतो के साथ नाचनेवाला अनाथ भिखारी भूतो को भले ही भगवान लगे, भूत भले ही उसकी प्रशसा के पुल बाधते रहे, उसे सिर पर विठाकर खूब नाचते रहे और भिखारियो के एक निष्काचन राजा के नाते उसके अज्ञात पराक्रम की विरुदावली भी गाते रहें, पर प्रजापति की दृष्टि मे भिखारी भिखारी ही है ।

सती · गृहिणी यदि पति-निदा सहन करने लगे, तो पुरुष किस आधार पर गृहस्थ होगा ? प्रत्यक्ष प्रजापति ही गृहिणी के सामने उसके पति की निदा करने लगे तो उसकी शिकायत कहा की जाय ? गृहस्थो को नियमो मे वाधना प्रजापति का काम है और उन गृहस्थो की पत्नियो को उन नियमो का पालन करना चाहिए, ऐसी मनु की आज्ञा है । भिखारी की ही क्यो न होऊ, पर मैं गृहिणी हू । ऐश्वर्यहीन भिखारी की गृहणी ही सपत्ति होती है । भिखारी की इस सपत्ति का अपमान करने की प्रजापति की भी हिम्मत नही ।

दक्ष : शब्दो का ऐश्वर्य दिखाकर ही भिखारी शान दिखाते हैं । ऐश्वर्य के अभाव को इस प्रकार शब्दो से पूरा करके भिखारी कितना भी बकते रहें, प्रजापति को उसकी परवा नही । भिखारियो की बकवास से प्रजापतियो के सिहासन नही डगमगाते । भिखा-रिन, तू जानती है यह यज्ञ किसलिए हो रहा है ?

सती . भिखारिन के ऐश्वर्यशाली पिता, यह मालूम होने पर ही मैं यहा आई हूं । बेटी का नाता भूलने की शक्ति यदि तुममे है, तो तुम उस सबध को भुला दो । मैं भिखारिन हू, इसलिए मन की अनुदारता मेरे लिए वर्जित है । आखें पोछो—जरा आखें पोछो । यज्ञ के धुए के साथ ही ऐश्वर्य का धुआ भी जरा दूर हटा दो और अपनी भिखारिन बेटी के मुह से समझदारी की चार बातें सुन लो ।

दक्ष : कौन है रे उधर ? इस भिखारिन को धक्के देकर बाहर निकाल

दो। (सेवक आते हैं।)

सती   खबरदार। दक्ष, यदि मुझे धक्के देकर निकालना ही है, तो केवल तुम्ही मुझे धक्का दे सकते हो। मैं दाक्षायणी हू—मुझे स्पर्श करने की तुम्हारे सेवको की मजाल नही। प्रेम के वधनो से जिन वाहुओ ने इस देह को किसी समय अपने हृदय से लगाया था, वही बाहु वात्सल्य का यह बधन तोड सकते हैं। (सेवको से) जाओ यहा से। (सेवक जाते हैं।)

दक्ष   यज्ञ-दीक्षा लेने के कारण मैं इस आसन से हिल नही सकता, नही तो मैं ही तुझे दो धक्के देकर वाहर निकाल देता और चिता-भस्म के पुट पोतनेवाले, व्याघ्रचर्म-भूपित अपवित्र भूत की भूतनी से इतने समय तक अपनी इस पवित्र यज्ञभूमि को मैं भ्रष्ट नही होने देता।

सती   पवित्र यज्ञ-भूमि भ्रष्ट हुई है या शकर की रानी के चरण-स्पर्श से पुनीत हुई है, इस विपय मे वहुत मतभेद होगा। परतु एक वात अव अवश्य निश्चित हो गई है और वह यह कि मुझसे वेटी का नाता तुमने तोड दिया है। है न ?

दक्ष   कन्यादान के दिन ही सती नाम की मेरी कन्या मर गई। यह यज्ञाग्नि इसकी साक्षी है।

सती   इसीलिए अव आगे की सारी कन्याओ को अनत काल तक जीवित रखने का कदाचित यह प्रयत्न हो रहा है।

दक्ष   . ऋत्विजो, रुक क्यो गये ? यज्ञ आरभ करो—हा, होने दो स्वाहाकार

सती   वद करो अपना स्वाहाकार।

दक्ष   अरे, यह तो आज्ञा देने लगी ! और तुम लोग भी उसकी आज्ञा सुनकर चुप हो गए ? यज्ञ आरम्भ करो।

सती   : शिवहीन अशिव यज्ञ को शिव की यह शक्ति रोक रही है।

दक्ष   : बडी आई कही की शिववाली—अशिवता का वह मूर्त्तिमान पुतला शिव कब हो गया ?

सती   : रे अधम, किसीसे भी द्वेष-भाव न रखनेवाले महादेव को इस

प्रकार नाम धरते समय तेरी जीभ जल क्यो नही गई ? तुझमे उनके चरणो की धूल की भी योग्यता नहीं। प्रेत-तुल्य देह को ही आत्मा मानकर, उसे चिरकाल जीवन प्राप्त कराने के लिए यज्ञ करानेवाला तू मदबुद्धि पापी—तेरे निंदा करने से शकर की योग्यता तिल-मात्र भी कम नही होगी। देह को ही सब-कुछ समझने के कारण अनतकाल तक जीवित रहने की लालसा किसी कायर या भीरु को ही होगी। जो यह समझ गया है कि देहमय जीवन के बिना भी अनत का अस्तित्व है, वह तेरे ऐसे अज्ञानी यज्ञ को कभी हाथ नही लगायगा। यदि मैं अपने सामने ऐसा मूर्खता-पूर्ण यज्ञ चलने दू तो यह महादेव के सह-वास का दुरुपयोग करने जैसा होगा। तेरे ये ऋत्विज तेरे ऐश्वर्य पर मोहित होकर, अपने पेट के लिए तेरी हा-में-हा मिला-येंगे। यह शेखी बघारने के लिए कि हम बडे वेदपारगत हैं, चाहे जिस कुकार्य के लिए यज्ञ करने तैयार हो जायगे। पशुओ के रक्त से यज्ञभूमि को सीच कर स्वर्ग के द्वार खोल देना चाहेंगे। परतु स्वर्ग के बदले अत मे तुझे भी साथ लेकर नरक मे सडते पडे रहेगे। अपने इन आधारस्तभो को देख। एक स्त्री के चार शब्दो से ही इनकी घिघ्घी बध गई। ऐसे स्तभो पर तेरा यह यज्ञ-मडप खडा है और ऐसी जीवहत्या की आहुतियो से तू विश्व के समस्त जीवो को अमरत्व देने जा रहा है! धिक्कार है, तेरी इस अहकारी मूर्खता को!

दक्ष — अरे, इस सिर-फिरी चुडैल को कोई धक्के देकर बाहर निकालो न!

कश्यप — दक्ष, यज्ञ-दीक्षा लेने के बाद ऐसा बर्ताव अश्लाघ्य है।

सती — देख, अब ये गूगे भी बोलने लगे। शकर की शक्ति का यह प्रभाव देख और अब भी सावधान हो जा। यज्ञ बद कर।

कश्यप — सती, तुम दक्ष की कन्या हो। पिता का इस प्रकार अपमान करना तुम्हें उचित नही।

सती — यज्ञाग्नि की साक्षी से जिसने मुझसे अपना नाता तोड दिया,

उसका पक्ष करना उसके आश्रितो को ही शोभा देता है। मुझे उसकी अब परवा नही । बोल दक्ष, तू यह यज्ञ बद करता है या नही ?

दक्ष अरी ओ डायन, दक्षप्रजापति को क्या तू हिमालय का कोई उलूक समझ रही है ? आजतक इस दक्ष ने किसीकी भी कोई सलाह अभीतक नही ली और न वह इतना मूर्ख है, जो दूसरो की सलाह से चले। इस यज्ञ का आरभ करते समय मैंने तुझसे कोई सलाह नही ली थी और अब वह तेरी इच्छा से बद भी नही होगा । दक्ष जैसा चाहेगा, उसी तरह विश्व को झुकना होगा। दक्ष इतना दुर्बल नही कि ससार के प्रत्येक क्षुद्र कीटक की इच्छानुसार वर्ताव करे। यह तो निर्बल भिखमगो का काम है कि भूत और पिशाचो को सहलाकर चाहे जैसा ऊधम मचाए और अपने ही हाथो अपनी आरती उतारे ! परतु पुरुषार्थी दक्ष को अपनी सामर्थ्य का समर्थन करने के लिए दूसरो के मुह की ओर ताकने की आवश्यकता नही पडती । लोग आदर करें, इसलिए उनके मतानुसार चलना दक्ष को लज्जास्पद लगता हे । जा, यहा से मुह काला कर !

सती मैं यहा से एक तिल-भर भी नही हटूगी । विपरीत बुद्धि से प्रेरित होकर दक्षप्रजापति यदि अधोगति के गर्त मे गिर रहा है, तो किसी समय उसको प्रिय रही, उसकी कन्या उसे उस गर्त मे नही गिरने देगी ।

दक्ष हे ऋत्विजो, चुप क्यो बैठे हो ? यज्ञ आरभ करो ।

सती दक्ष, यह अविचार छोड दे। इससे कभी तेरा कल्याण नही होगा । अपनी ही बेटी की परवा न करनेवाला तू—तुझे जगत पर क्या दया आयगी ? जगत को अमरत्व प्राप्त करा देने के इस ढोग की आड मे, तेरे कायर मन को मृत्यु का जो भय लग रहा है, वह स्पष्ट दिखाई देता है। महादेव से तू डरता है न ? फिर उसके लिए यह यज्ञ क्यो ? उनकी शरण जा—फिर तुझे मृत्यु का कोई भय न लगेगा ।

दक्ष अब मृत्यु का भय तेरे महादेव को ही है ।

सती महादेव को मृत्यु का भय ! पागल दक्ष, महादेव को मृत्यु का भय दिखाने की सामर्थ्य किसमे है ? यह महादेव की शक्ति यहा जगमगा रही है । क्या वह शक्तिहीन है ? इस शक्ति का नाश करने पर ही तुझे महादेव दीखे और महादेव के दर्शन के बाद कौन किसे मृत्यु का भय दिखाता है, यह आप-ही-आप दीख जायगा ।

दक्ष महादेव ! महादेव ! बस कर ! उस वैताल की स्तुति काफी सुन चुका । इस जगत मे दक्षप्रजापति के अतिरिक्त न कोई देव है, और न कोई महादेव है । ऋत्विजो, आहुति आरभ करो ।

सती खबरदार यज्ञ-पात्र को हाथ लगाया तो ! इस यज्ञ-वेदी के सामने मैं इसी तरह खडी रहूगी और अन्न-जल वर्जित करके यज्ञ मे विघ्न डालूगी । पर यही क्यो ? इस पापी प्रजापति की अमगल जिह्वा द्वारा उच्चारित पति-निंदा जिस देह ने सुनी, वह देह ही मैं क्यो रखू ? जब कोई मुझे दाक्षायणी कहकर पुकारेगा, तब उस नाम से लज्जित होकर, मुझे गर्दन झुका देनी पडेगी । इस शिव-निंदक की कन्या के नाते जीवित रहने की अपेक्षा इस देह को ही नष्ट कर देना क्या बुरा ? देख दक्ष, देख, यह शैवी शक्ति यज्ञ भग करने के लिए इस पचभूतात्मक देह का त्याग करके तेरे यज्ञ मे विघ्न कर रही है । देखो—हे ऋत्विजो, देखो । शव-स्पर्श से अपवित्र हुई यज्ञभूमि को फिर तुम किन मत्रो से आहुति दोगे ?

कश्यप : आत्महत्या महापाप है ।

सती यह आत्महत्या नही । इस दक्ष से मैं जब कोई सबध नही रखना चाहती । मेरे पति की निंदा करने वाला—मेरे पति को अवमानित करनेवाला—मेरे पति के निरवच्छिन्न अधिकार को नष्ट करने के लिए यज्ञ करनेवाला, यह दक्ष कहलानेवाला अदक्षप्रजापति मेरी इस देह का जनक है, यह कहते मुझे मरणातक यातनाए होगी । इन अमगल स्मृतियो की यातनाओ के

कारण क्षण-प्रतिक्षण मेरे हृदय के टुकडे-टुकडे होगे और ऐसी स्थिति मे महादेव की पत्नी के नाते शान दिखाने मे मुझे बहुत लज्जा आयेगी। कैलास के निर्मल वातावरण मे सचार करने-वाली यह देह भी निर्मल होनी चाहिए। ऐसी अमगल देह के सपर्क से महादेव के निर्मल सहवास को भ्रष्ट करने की अपेक्षा इस देह को अग्नि के हवाले कर देना क्या बुरा ? हे सारे ऋषि, मुनि, देव, गधर्व, यक्ष-किन्नर, देखो, इस सती का आक्रोश देखो। देखो, महादेव की अमोघ शक्ति से बलवान हुई सती की यह जीवन-ज्योति—अपनी पचभूतात्मक देह इस यज्ञ-कुड के हवाले करके नई देह धारण करने के लिए हिमालय जा रही है। दक्ष, तेरा यज्ञ कैसे सफल होता है, यह अब तू ही देख। तुझे अपनी सामर्थ्य का यदि कुछ अभिमान हो तो उसे दिखाने का यही समय है। जिस शक्ति के जन्म के साथ तू प्रजापति बना, वह शक्ति, देख, यह चली। जय शकर, जय शकर—हरहर महादेव ! **(यज्ञ-कुड में कूद पडती है। परदे में हर हर महादेव।)**

दक्ष यह क्या ! मेरे अन्त पुर से महादेव की जय की आवाज कैसे आ रही है ?

कश्यप दक्ष, तुम्हारा और मेरा सबध अब समाप्त हो गया। जिस शक्ति के कारण मै तुमसे सबधित था, वह शक्ति अभी-अभी ही तुमसे सबध तोडकर तुम्हारे ही यज्ञ मे भस्म हो गई। हे ऋत्विजो, अब क्या यज्ञ कर रहे हो ? यज्ञ-दीक्षा लेकर अपनी ही कन्या की आहुति लेनेवाले इस राक्षस को क्या तुम आशीर्वाद दोगे ? उठो-उठो। भागो जल्दी। भीतर छिपे बैठे शकर के गणो को मैंने अभी-अभी ही यहा से जाते देखा है। यदि वे कही शकर को ले आए तो

ऋत्विज भागो-भागो-दौडो—**(ऋत्विज भाग जाते हैं।)**

दक्ष पीछे लौटो। कायरो, पीछे लौटो ! यदि भूतो से डरते हो तो तुम्हारे वेद-मत्र किस काम के ? क्या केवल यज्ञ की आहुति तक ही तुम्हे वेद मत्र याद आते है ? पीछे लौटो। यदि वेद-

मन्त्रो के बल से तुम्हारा भय न जाता हो तो इस दक्षप्रजापति के बाहुबल पर विश्वास रखकर पीछे लौटो। वेद-मन्त्र धोखा दे सकते हैं, परतु दक्षप्रजापति कभी विश्वासघात नहीं करेगा। अरे, यह क्या ?—क्या सब भाग गए !

कश्यप दक्ष, मन्त्रो के उच्चार से भाग जानेवाला भूत यह नही। इसका आवाहन करने के लिए ही मन्त्रोच्चार करना पडता है। यह महद्भूत है। इस महद्भूत के विसर्जन के लिए तुम कितने भी प्रयत्न करो, वे कभी सफल नहीं होगे। जितना यज्ञ हो चुका, उतना पर्याप्त है। अब पूर्णाहुति के लिए न रुककर, यज्ञ का विसर्जन करो। इसीमे तुम्हारा कल्याण है।

दक्ष रे कायर, तेरे विश्वास पर रहकर, मैं अब यज्ञ-समाप्ति की प्रतीक्षा नही करूगा। यह प्रतापशाली दक्ष अपने प्राण बचाने के लिए भी दूसरे के बल पर निर्भर नही रहेगा। सती ने यज्ञ मे प्राण दे दिए इसलिए कायरो, क्या यज्ञ मे विघ्न उपस्थित हो गया ? पहले ही तुम्हे यह क्यो नही सूझा ? जा—जा कश्यप, तू भी चला जा। मुझे तेरी सहायता की जरा भी परवा नही। जा, यज्ञकुड मे जलकर राख होने के लिए दौडकर आनेवाले उस कैलास के गिद्ध की आरती उतारने को हाथ मे चूडिया पहनकर, तैयार हो जा। जा।

कश्यप दक्ष, तू अकारण ही ब्राह्मण का अपमान कर रहा है। पर याद रख, यह तेरे भावी नाश की पूर्व-सूचना है। मैं तो जा ही रहा हू। मेरा और तेरा सेवक और स्वामी का सबध तो आज इसी क्षण टूट ही चुका है। पर तुझसे पुन कहता हू कि शकर से बैर करना छोड दे। वह आये तो उनसे क्षमा माग। महादेव दयालु है। वह तुझे क्षमा कर देंगे।

दक्ष जा रे दर्भ वाहक, तेरे बल पर मैं नही बढा हू और न तेरी सलाह से मुझे चलना है। दूसरे की कृपा से जीवित रहने की अपेक्षा यह दक्षप्रजापति इस क्षण भी आनद से मरने को तैयार है। जा—जा, मेरी दृष्टि के सामने मे हट जा।

काश्यप डूबनेवाले को बचाना नही चाहिए, यही सच है । दक्ष, आनद से अपनी इच्छानुसार काम कर, आनद से वेद-मत्र कह, आनद से ब्राह्मणो की निंदा कर और आनद से यज्ञ समाप्त कर । पर यह ध्यान में रख कि तेरा यह आनद—अपने वल का यह तेरा अहकार, महादेव के सामने नही चलेगा । उनके आते ही जब तेरा सिर धड से अलग होने लगेगा, तब उस आनद को बनाये रखने का प्रयत्न कर । (जाता है ।)

दक्ष जा—जा ! ऋषियो, मुनियो, देवो, गधर्व और किन्नरो, तुम भी सब भाग जाओ । तुम्हारे सुख के लिए ही मैं यह यज्ञ कर रहा था, परतु दुर्भाग्य से तुम्हीं चिरकाल तक जीना नही चाहते तो इसके लिए मैं क्या करू ? जाओ, सारे मरकर, जलकर भस्म हो जाओ । तुम्हारे शरीर जलकर राख हो जाय, तो उसकी एक चुटकी-भर राख को मैं देखना नही चाहता । तुम्हारी हड्डिया जलकर कोयला बन जाय तो उन पर पैर रखने को भी दक्ष तैयार न होगा । तुम्हारे जीवन का अता-पता भी जल जाय, तब भी मुझे उसकी परवा नही । इस यज्ञ को मैं अकेला ही पूरा करूगा । ऋत्विज भी मैं ही रहूंगा और यज्ञकर्ता भी मैं ही रहूंगा । यज्ञ का हविर्भाग लेने से यदि देव इन्कार करेंगे तो इस होम-कुड मे मैं ही उसकी आहुति दे दूगा । सारे देवो को नाश करके मैं अकेला उनके अभाव की पूर्ति करूगा । सबके हविर्भाग भी मैं ही लूगा । किसीकी भी मुझे अब आवश्यकता नही । मै ही जिऊगा या मैं ही मरूगा । मैं ! मैं मरूगा ? अरेरे ! क्या, मै मरूगा ? सारे जगत को जीवित रखनेवाला मैं, क्या मर जाऊगा ? मैं मरूगा याने क्या होगा ? यह जग इसी तरह रहेगा । सूर्य और चन्द्रमा इसी प्रकार घूमते रहेगे, पानी उसी तरह बरसता रहेगा । नदिया इसी तरह बहती रहेगी, कोई जन्म लेगा, कोई बडा बनेगा, बोलेगा, हसेगा, चलेगा, फुदकेगा और मैं अवश्य नहीं रहूंगा ! मैं मर जाऊगा ! अरेरे ! मैं मर जाऊगा । नही,

मैं नही मरूगा । प्रत्यक्ष कृतान्त भी यदि मेरे सामने आकर खडा हो जाय, फिर भी मैं अपने को मरने नही दूगा । सहार करनेवाले इस निर्भय हृदय मे मरण का यह कायर भय कहा से आ गया ? अरेरे ! यह हृदय क्यो धडकने लगा ? हे दक्ष की देह, तू इस तरह काप मत । हे प्रजापति की ऐश्वर्यशालिनी जिह्वा मन्त्रघोष कर । (**मन्मथ आता है ।**)

मन्मथ . भागिये देव, भागिये । शकर के भयकर गणो ने नगर पर आक्रमण कर दिया । भागिये—अपने प्राण लेकर भागिये !

दक्ष रे नपुसक, तुझे भागना हो तो भाग जा और अपने क्षुद्र प्राण बचा । मेरे प्राणो का मूल्य मेरे अपमान की अपेक्षा अधिक नही । मेरा यज्ञ पूरा होना ही चाहिए । शकर के गणो से जाकर कह दे कि वे नगर को जलाकर चाहे राख कर दे, फिर भी अपने यज्ञ को अधूरा छोडकर मै किसी की भी रक्षा के लिए नही दौडूगा । अपने यज्ञ की अपेक्षा जगत के क्षुद्र जीवो की मुझे परवा नही । अपने यज्ञ का काम पूरा करने मे मैं अब ब्रह्माजी से भी हार नही मानूगा । शकर के करोडो पिशाच आकर यज्ञ-भूमि को नष्ट-भ्रष्ट कर डाले, फिर भी पूर्णाहुति के लिए आगे बढा हुआ मेरा यह हाथ टूट जाने पर भी पीछे नही हटेगा ।

(**मन्मथ पुन प्रवेश करता है ।**)

मन्मथ देव, भागिये—भागिये, सारे नगर मे भयकर प्रलय मचा है। असख्य वेषधारी कुरूप पिशाचो ने सारे नगर मे कोहराम मचा रखा है । शकर का वीरभद्र नाम का एक गण इस पिशाच-सेना का सचालन कर रहा है । उसकी डरावनी ललकारो से सारा ब्रह्माड गूज उठा है । हर व्यक्ति को यह भय लग रहा है कि कही आकाश लडखडाकर अपार समुद्र मे तो नही डूब जायगा । सुनो देव, सुनो, यह बिजली की तरह कडकने वाली घमासान की गडगडाहट सुनो ! देव, अब इस जल रहे जगत पर अपनी दया का जल बरसाकर, सबको सजीव करो ।

दक्ष पुरुष का रूप धारण करनेवाला कापुरुष, यहा से काला मुह कर। मेरे हृदय मे इस समय यज्ञ-मन्त्र स्फुरित हो रहे है। ऐसे समय युद्ध की बाते क्यो करता है ? तेरे मुह से युद्ध के ये वर्णन भी जनाने लगते है। जा, शकर के गणो से कह दे कि वे अपने उस वैताल को ही यहा ले आवे। वह यदि आया तो उसे इस यज्ञ-कुड मे .

मन्मथ : देव, वह ही आ गए। देखिये वह आ गए। (स्वगत) मन्मथराज, अब तुम खिसको। **(जाता है और यज्ञ-मडप का एक भाग लड़खड़ाकर गिर पडता है। परदे में—"दे, दे, मेरी सती दे।")**

दक्ष वेदमन्त्रो, दौडो-दौडो। मेरी रसना के अग्रभाग पर थिरक-थिरककर पूर्णाहुति की पूर्त्ति करो। क्या हो गया यह ! मन्त्र क्यो याद नही आ रहे है ? दौडो वेदो, दौडो। ऐन समय पर इस दक्ष को धोखा मत दो। ऋत्विज भाग गए। पर मन्त्रो, तुम क्यो भागते हो ? अरेरे, स्फूर्त्ति यदि शरीरधारी होती तो इस समय उस विश्वासघातनी का गला दबाकर उसके प्राण ले लेता ! वेद ! वेद ! हे मत्स्यकूर्मो के कुमार, तुम जाकर कही जल मे तो नही छिप गए ? क्या करू ? क्या यह मस्तक फोड लू या इस हृदय को चीर डालू ? मन्त्रो, आओ–आओ—आओ, मेरी जिह्वा पर आओ। सभी भाग गए ! अब यह पूर्णाहुति कैसे दू ? किन मन्त्रो से ? कैलास के आगिया वैताल को खूब गालिया देकर क्या यही आहुति दू ? अरेरे, गालिया यदि वेदमन्त्र होती, तो इस समय मैं उसे लाखो गालिया देता ! पर अब

(शकर प्रवेश करते हैं।)

शकर पर अब तेरा यह काल तेरे यज्ञ मे तेरी ही पुर्णाहुति देगा। प्रजापति कहलानेवाला नरपिशाच, मेरी सती कहा है ?

दक्ष धोखा-धोखा! इन वेदमन्त्रो ने ऐन समय पर मुझे धोखा दे दिया !

शंकर नीति-भ्रष्ट, विवेकहीन, पाषाणहृदयी और अहकारी की जिह्वा पर आकर वेदमन्त्र क्यो भ्रष्ट होना चाहेगे ? दक्ष, **मेरी**

सती कहा है ? (उसकी गर्दन पकड़ लेता है।)

दक्ष तेरी सती ? तेरी सती मर गई। इस यज्ञ मे मैंने उसकी आहुति दे दी।

शंकर अपनी ही कन्या की बलि देनेवाला रे पापी, तू सती की आहुति देगा ? शकर के वज्रहृदय की राख करके उसपर असख्य विश्वो की स.मिधाए रचे बिना सती की आहुति पडनेवाला यज्ञ-कुड तैयार नही होगा। चाडाल, क्या तू सती की आहुति देगा ? मैंने तेरी गर्दन इस तरह दबा दी है और उसका प्रतिकार करने की रत्ती-भर भी शक्ति न रखनेवाला तू रणभीरु—तू सती की आहुति देगा ?

दक्ष यज्ञ की पूर्णाहुति मे तेरा सहार करने के लिए आगे बढा हुआ यह हाथ यदि मैं पीछे हटा सकता, तो इस समय शकर का नाम ही ससार से मिट जाता।

शकर तो फिर उठा वह हाथ और कर महादेव से युद्ध।

दक्ष सहार का सहार करने के लिए आगे बढा हुआ हाथ आत्म-रक्षा के लिए क्या पीछे खीच लू ?—नही, इस दक्ष का यह बाना नही। चाहे यह मस्तक टूटकर गिर पडे, पर यह हाथ पीछे नही हटेगा। शकर का गला दबाकर उसके रक्त की अजलि भरने के लिए भी यज्ञाहुति का यह हाथ मैं पीछे नही खीचूगा।

शंकर अरे मूर्ख, प्रत्यक्ष शकर ही तेरे सामने खडा है, तब भी उसके नाश के लिए क्या तू आहुति देता रहेगा ?

दक्ष मुझे शकर का नाश नही करना है, शकर की शक्ति का विनाश करना है।

शकर शकर की शक्ति तुझसे उत्पन्न हुई मानवी देह का त्याग करके, असख्य विश्वो के जगमगाते हुए परमाणुओ मे विलीन हो गई। जिस जीवित ज्योति को प्रत्यक्ष यह महादेव भी न रोक सका, उसका नाश करने की दुर्बुद्धि रखनेवाले मतिमद विद्वान्, धिक्कार है तेरी विद्वत्ता को!

दक्ष (दात पीसकर) अरे, वेद-मत्र कहा चल दिए ? अब इन मृत

वेदो को तिलाजलि ही दे देता हू। (शंकर उसे पटककर उसकी छाती पर सवार हो जाते है।)

शंकर वेदो को तिलाजलि देना चाह रहे इस अधम ब्राह्मण का यह हृदय इस त्रिशूल मे

प्रसूती (दौडकर त्रिशूल पकड़ लेती है।) सती की इस दुर्बल मा का मस्तक पहले उडा दीजिए। दक्षप्रजापति की मृत्यु से सती की मा के विधवा हो जाने पर, विधुर हुए शक्तिहीन महादेव को क्या सतोप हो जायगा ? प्रिय पत्नी के चल बसने के कारण उसकी प्रिय मा का सौभाग्य छीन लेने से क्या महादेव का विधुरत्व चला जायगा ? इसकी अपेक्षा तो प्रसूती को मारकर, सती का मायका ही नष्ट कर दीजिए।

शंकर (दक्ष की गर्दन छोड़कर) सती का मायका ? जिस मायके के लिए सती ने मुझे छोड दिया, अटल प्रेम के अटूट बधनो को तोडकर जिसे देखने के लिए सती अपने प्रिय कैलास से नीचे कूद पडी, वही सती का मायका ! दक्ष, मेरी पत्नी ने मुझे विरहाग्नि मे डाल दिया, परन्तु तेरी पत्नी ने इस यज्ञाग्नि मे पडनेवाले तेरे मस्तक को बचा लिया। देवी, प्रसूती, मेरी प्रतिज्ञा थी कि मैं इसका मस्तक काट डालूगा। परतु तुम्हारे लिए, तुम्हारे सौभाग्य का सिंदूर बनाये रखने के लिए मैं इस कन्याघातकी को मस्तिष्कहीन पागल करके छोड देता हू। (दक्ष मूर्च्छित होकर गिर पड़ता है।)

प्रसूती देव, मेरे सौभाग्य के प्रकाश मे तुम्हारे हृदय की स्वामिनी तुम्हे दीख पडे, यही इस अभागिनी मा का तुम्हें आशीर्वाद है।

(यज्ञ-मडप का शेष भाग भी लडखड़ाकर गिर पड़ता है।)

पंचम अंक

दृश्य एक

(रति और मन्मथ)

रति — तो मतलब यह कि अब सब शान्त हो गया ?

मन्मथ — हा । ऐसा कह तो सकते है । दक्षप्रजापति के इधर-उधर भटकते रहने के कारण जहा-तहा अराजकता फैल गई थी । इसीलिए शकर ने राजनीति पर वैशालाक्ष नाम का एक ग्रथ लिखा और उसीके अनुसार प्रजा-पालन की व्यवस्था कर दी । पर प्रजापति का स्थान अभीतक रिक्त पडा है ।

रति — कश्यप कहते थे कि प्रजापति के होश के आने के बाद ही वह फिर अधिकारारूढ होगे ।

मन्मथ — हा । ऐसा होगा तो । पर यह होने के लिए पहले शिव और पार्वती का विवाह हो जाना चाहिए ।

रति — पार्वती ! यह पार्वती कौन है ?

मन्मथ — दक्ष-यज्ञ मे अपने शरीर की आहुति देने के बाद दिव्य देह धारण करके अब सती ही पार्वती के नाम से प्रसिद्ध हुई है । वह अपने को हिमालय की कन्या कहती है । पर वह कन्या किसी-की हो, इससे मुझे मतलब नही । जब पता चलता है कि कही कोई कन्या है, तब मुझे यह चिंता लग जाती है कि उसे पत्नी कैसे बनाऊ ? परतु यह विवाह सच्चा विवाह नही कहा जा सकता । इसे बहुत हुआ तो पुर्नमिलन कह सकते है ।

रति — अच्छा, यह बात है ? तो कदाचित इसीलिए महाशयजी ने हिमालय पर आज यह पुन आक्रमण किया है ?

मन्मथ — उस समय का आक्रमण भिन्न था और अब का यह आक्रमण बिल्कुल ही विचित्र है । उस समय शकर के अज्ञान के कारण जो कार्य बडी सरलता से हो गया था, वह अब कितनी कठिनाई

से होगा, इसका स्वय मैं भी कोई अनुमान नही लगा पा रहा हू । यदि शृगी-भृगी से भेट हो जाती, तो उनसे शकर की वर्तमान मन स्थिति का पता लग जाता और फिर उसी रुख से मै अपना कार्य-क्रम बनाता ।

रति परतु आगामी कार्यक्रम निश्चित करने के लिए हमे सती—नही, पार्वती से मिलना भी तो आवश्यक है ।

मन्मथ हा । पर उसका पता मुझे मायावती से मालूम हो गया है । मुझे इस समय चिता यह हो रही है कि महादेव से भेट कैसे हो ?

रति मै सोचती हू, इस समय हम शकर के निवास-स्थान के आसपास ही कही खडे है । हा, सच तो है—देखो, वे शृगी और भृगी इसी तरफ चले आ रहे हैं ।

मन्मथ अरे वाह ! तव तो कहना होगा कि मेरे कार्य के लिए यह एक वडा शुभ सगुन है । **(शृगी और भृगी आते है ।)** आइये-आइये, शृगीराज, भृगीराज, आइये । कहिये आपके महादेव का क्या समाचार है आजकल ?

भृगी अरे वाह, कौन ? मन्मथ और रति ? क्योजी मन्मथ, हमारी मा कहा है ?

मन्मथ अरे भई, यही पूछने तो हम आये हैं ।

शृगी वाह, यह भी कोई बात हुई ? हमारा ही प्रश्न हम पर फेंक देना हमारे प्रश्न का उत्तर नही हो जाता । समझे ?

भृगी अच्छा वह प्रश्न छोडो अभी । पर मन्मथ, यह कैसे हुआ ? हमारे देव की अर्द्धांगिनी तो यज्ञ-कुण्ड मे कूद पडी, पर तुम्हारी यह अर्द्धांगिनी अभीतक जीवित कैसे रही ?

मन्मथ क्योकि वह यज्ञ-कुण्ड मे नही कूदी इसलिए।

शृगी पर वह क्यो नही कूदी ?

मन्मथ वह कूदना नही चाहती थी । यदि सती ने कोई नासमझी कर दी, तो इसका मतलव यह नही कि रति को भी वही करना चाहिए।

शृगी वाह, वाह ! यह भी कोई विचार हुआ ? जब हमारे देव की

अर्धागिनी यज्ञ-कुड मे कूद पडी, तो ससार की सब अर्धागिनियो को भी यज्ञ-कुड मे क्यो न कूद पडना चाहिए ? हमारे देव अपनी अर्धागिनी की याद मे दुखी हो, और तुम अपनी अर्धागिनी साथ लिये मजे मे घूमते रहो, यह हमे कभी अच्छा न लगेगा ।

(शृंगी और भृंगी रति को पकड़कर घसीटने लगते हैं ।)

रति — ओ मा ! क्या ये पिशाच अब मेरे प्राण ही ले लेगे ? चलो, चलो । छोडो अपने सब विचार । चलो, पहले यहा से हम भागे ।

शृगी — पर हम भागने दे तब न ? हम कुछ नही सुनना चाहते । मन्मथ, हम अभी एक कुण्ड जलाते है और उसमे तुम्हारी इस रति को कूदना ही होगा ।

रति — अरे मूर्ख, तेरे देव की अर्धागिनी तो अपने प्राणो मे ऊब उठी थी । पर मैं अपने प्राणो से नही ऊबी हू ।

भृंगी — ऐसी धोखेबाजी हमारे यहा नही चलेगी । तुम्हारी गप्पो मे हम कभी नही आयेगे । तुम्हे मरना ही होगा । दक्ष के यज्ञ को हमने किस प्रकार नष्ट-भ्रष्ट कर डाला था, यह तो तुमने देखा था न ? या भूल गई इतनी जल्दी ?

मन्मथ — अरे पागलो, यह क्या करते हो ? तुम्हारे देव की अर्धागिनी अपनी इच्छा से अग्नि से कूदी थी, यह तो तुमने देखा था न ?

शृगी — अच्छा माना, कि हमारे देव की अर्धागिनी अपनी इच्छा से आग मे कूदी थी । तो क्या इसे अपनी अनिच्छा से भी अग्नि मे कूदकर प्राण नही दे देना चाहिए ? ना भई, यह न्याय तो अपनेराम की समझ मे नही आता । मै कुछ नही सुनना चाहता । इसे आग मे कूदकर प्राण देने ही होगे । हमारे कैलास पर जो प्राणी आता है, वह यदि हमारे देव से अधिक सुखी हुआ, तो यह हमसे नही सहा जाता ।

रति — अरे शृगी, यू क्रोधित मत हो । हमने तुम्हारे देव को जिस तरह पहले एक अर्धागिनी ला दी थी, उसी तरह यदि तुम चाहो तो तुम्हारे लिए भी एक अर्धागिनी ला देगे ।

भृगी — अर्धांगिनी लेकर मैं क्या करूगा ? अर्धांगिनी किस काम के लिए होती है, यही मैं नही जानता ।

मन्मथ — जब एक अर्धांगिनी तुम्हें मिल जायगी, तब तुम सबकुछ आप-ही आप जान जाओगे ।

भृगी — नही रे भई, व्यर्थ ही पुन एकाध यज्ञ करना पडे शायद ।

मन्मथ — अच्छा तो छोडो । तुम नही चाहते, तो न सही । पर तुम्हारे देव को यदि हम पुन एक अर्धांगिनी ला दें तो ?

भृगी — पुन ? याने एक अर्धांगिनी के समाप्त होने के बाद क्या पुन दूसरी अर्धांगिनी भी प्राप्त की जा सकती है ? प्रत्येक को एक--के बाद एक ऐसी कितनी अर्धांगिनिया प्राप्त हो सकती हैं ?

मन्मथ — चाहे जितनी, या जितनी मिले उतनी ।

भृगी — अच्छा, यह बात है ? पर मन्मथ यह तो बताओ कि देव की यह नई अर्धांगिनी हमारी मा होकर रहेगी या हमारी कन्या होगी ? मगर कन्या याने क्या, यह मैं अभीतक नही समझ पाया हू ।

भृगी — यह मैं बताता हू । जो पति से लडकर पिता के घर जाती है और वहा पिता से लडकर पति को रुलाने के लिए अग्नि मे कूद पडती है, वह कन्या है । जैसे हमारी सती दक्ष की कन्या थी । पर मन्मथ, जो हुआ सो ठीक ही हुआ । हमारी मा के मर जाने से हमे कष्ट होते हैं यह सच है । पर कम-से-कम हमारे महादेव अब पुन पहले जैसे समाधि-मग्न होने लगे, यह क्या कुछ कम लाभ हुआ ?

भृगी — मूर्ख हो तुम । आजकल देव क्या आनद मे समाधिमग्न होते हैं । क्या तुमने देखा नही, मा का नाम ले-लेकर कैसे दीर्घ निश्वास छोटते रहते हैं ।

भृगी — और मै क्या कम रोता हू ? मन्मथ, तुम्हें क्या एकाध और दक्ष-प्रजापति नही मिलेगा ? देखो भई, प्रयत्न करो और खोज लाओ एकाध कन्या कहीं से । क्या करू जी, यदि मैं कही से अर्धांगिनी प्राप्त कर लेता, तो मुझे भी एकाध कन्या मिल जाती ।

और फिर उस कन्या को मै देव की अर्धांगिनी बना देता। पर मैं प्रजापति कहाँ हू ? मैं सोचता हू कि केवल प्रजापतियो के ही कन्याए हुआ करती हैं।

रति पहले यह वचन दो कि तुम मुझे अग्नि मे नही जलाओगे, तो हम भरसक प्रयत्न करके तुम्हारे देव के लिए एक अर्धांगिनी खोज लाते है। **(मन्मथ से एक ओर)** हम जो चाहते थे, यह खबर हमे मिल गई। अब यहा से सटक चले, यही अच्छा। नही तो ये पिशाच सचमुच ही मुझे आग मे जला देगे।

भृगी अच्छा हम वचन देते है--हमने खूब सोच लिया। हमे तुम्हारी बात स्वीकार है। हम तुम दोनो को ही छोड देते है। पर आज ही हमारे देव को एक अर्धांगिनी ला दो। पर हा, वह हमारी या हमारे देव की कन्या नही होनी चाहिए। हमे आवश्यकता है मा की और देव को आवश्यकता है अर्धांगिनी की, यह ठीक से ध्यान मे रखना। समझे ?

मन्मथ तुम्हारी सब शर्ते हमे स्वीकार है। हा, पर एक काम तुम्हे भी करना होगा। हम उस नजदीक के पहाड पर ठहरे है। जब तुम्हारे देव समाधिमग्न हो, उस समय वहा आकर हमे खबर दे देना। तुम्हारे यह करने पर सब बाते तुम्हारी इच्छा-नुसार हो जायगी। **(रति और मन्मथ जाते हैं।)**

भृगी इसमे सदेह नही भृगी कि यह मन्मथ बडा विलक्षण प्राणी है चाहे जिसे चाहे जो बना देता है। कन्या को मा बना देता है, मा को पुन कन्या बना देता है और फिर मा है सो है ही। इतना ही क्यो, उस यज्ञ के दिन उसने हमे मन्मथ ही बना दिया था कि नही ? पर उसने एक झुठाई कर दी थी। अपनी सारी पोशाक तो हमे दे दी। पर उसने अपनी रति हमे नही दी।

भृगी अरे सच ! हम उससे पोशाक मागने को बिल्कुल भूल ही गए।

भृंगी अभी वह फिर आयेगा ही। उस समय उसकी पूरी पोशाक के साथ मैं उससे उसकी रति भी माग लूगा। रति के बिना पोशाक

की क्या शोभा ? यद्यपि अर्धांगिनी मैं नही चाहता, फिर भी पोशाक के साथ यदि मुझे रति मिल जाय, तो कोई हर्ज नही। सिर्फ पोशाकी रति। पोशाक की तरह मै उसे भी पुन मन्मथ को लौटा दूगा। उस वेचारे को मैं क्यो लूटू ?

भृगी अव यही वेठैं-वैठे वाते करते रहने से काम कैसे चलेगा ? देव के समाधिमग्न होते ही हमे जाकर मन्मथ को खवर जो देनी है। अरे, पर यह कौन है ? देखो-देखो, कैसी विचित्रता है यह। **(दक्ष शरीर पर फटे कपडे और सिर पर पत्तो का मुकुट पहने हुए प्रवेश करता है।)**

दक्ष कौन है रे उधर ? मन्मथ कश्यप से कह दे कि आज यज्ञ की पूर्त्ति होनी ही चहिए। क्यो, उत्तर क्यो नही देता ? क्या तू भी उस पिशाच के दल मे सम्मिलित हो गया ?

भृंगी अरे-रे ! यह तो दक्ष है। इसकी यह कैसी दशा हो गई है ?

दक्ष हा, तुम ठीक कहते हो। मैं दक्षप्रजापति हूँ। यह मेरा मुकुट देखो। कम-से-कम अव तो तुम्हे विश्वास हुआ कि मैं दक्ष-प्रजापति हू। अरे, यह सारा ससार पागल कैसे हो गया ? अरे मूर्खो, तुम अनन्त काल तक जीवित रहना चाहते हो न ? फिर देख क्या रहे हो ? आओ-आओ इस दक्ष की छाती पर होम कुण्ड जलाओ और उसमे अपने-अपने मस्तक की आहुति दो।

भृगी क्यो जी दक्षप्रजापति महाराज, क्या तुम्हारे एकाध कन्या है ?

दक्ष कन्या ? थी—मेरे एक कन्या थी। परतु वह मैंने एक पहाडी गिद्ध को अर्पित कर दी। उस गिद्ध ने उसका मास लार टपका-टपका कर खाया और उसकी हड्डियो का ककाल लाकर मेरे मुकुट पर रख दिया। मेरे मुकुट पर सदा वडे अनमोल हीरे और रत्न जडे रहते थे। हड्डियो का ककाल कभी उसपर नही रखा था। सुनो, यह कडकडाहट सुनो। क्या कहा ? यह यज्ञ-मण्डप के लडखडाकर गिरने पडने की आवाज है। नही, विल्कुल नही। तो क्या मैं उस ककाल की हड्डिया चवा रहा

हू। नही, बिल्कुल नही। यज्ञ दीक्षा लेने के बाद कडकड आवाज करने के लिए भी मैं अपनी कन्या के ककाल की हड्डिया नही तोडूगा। हड्डियो के स्पर्श से क्या मैं धर्म-भ्रष्ट नही हो जाऊंगा ?

भृंगी (स्वगत) अरे यह क्या बक रहा है ? (प्रकट) अजी दक्ष-प्रजापति जी, तुम्हारी सती नाम की एक कन्या थी न ?

दक्ष सती नाम की मेरी कन्या थी। अरे-रे, पितृ-प्रेम को मैंने हड्डियो का ककाल बना दिया। हृदय के हिमालय के तले मैंने उस ककाल को कुचल डाला। अपने हृदय के हृदय मे मैंने चुपचाप उसकी हत्या कर दी। क्या फिर भी तुम्हे उसका पता चल गया ? अरे धूर्तो, क्या मेरा राज्य लेना चाहते हो ? ले लो। राज्य का मुझे कोई मूल्य नही। सती की अपेक्षा मुझे राज्य बडा नही लगता। अच्छा ? तो अब तुम यह पूछ रहे हो कि फिर मैंने उसकी अवमानना क्यो की ? (जोर से हँसकर) वह तो एक परिहास था। समझे ? मैने प्यार से उसका परिहास किया। और उसने भी पितृ-प्रेम के आवेश मे परिहास से—केवल परिहास से—आत्म-हत्या कर ली। वह जल गई, वह भी परिहास से। जहा-तहा परिहास का वाजार गर्म है। प्रजापति के सिंहासन पर परिहास का विजूका विठा दिया है और उसके सिर पर परिहास का ही मुकुट पहना दिया है। उस मुकुट के ढक्कन के तले परिहास का मस्तक ढाक कर रख दिया हे। यही विश्व अच्छा है। इस विश्व का मैं स्वामी हू, सुना। इस विश्व का मैं स्वामी हू। यह भी परिहास ही है। **(हँसता है और सिर का मुकट उतारकर उसकी ओर देखता हुआ बुदबुदाता है।)**

शृंगी और हम यहा खडे हैं, यह भी परिहास ही हे ?

भृंगी अरे चुप रहो। यह पागल हो गया है शायद। चलो, हम इसे देव के पास ले चलें। अरे-रे, कितनी बुरी दशा है वेचारे की। हमारी मा का नाश यद्यपि इसीके कारण हुआ है, फिर भी इसपर मुझे दया आती है। चलो शृंगी, इसे हम देव के पास

ले चले और पुन इसे पहले जैसा ही कर देने की देव से प्रार्थना करे ।

दक्ष . सती, मेरी प्यारी बेटी—क्या मुझसे रूठ गई हो ? हा, पगली, बाप के हृदय मे कही प्यार भी होता है ? बेटी, मेरा वात्सल्य यदि मेरे पैरो मे होता, तो मैं तुझे लात मार देता । अरे-रे, यह सती नही, यह मेरा मुकुट है । हे प्रतापशाली परिहास, बैठ जा मेरे मस्तक पर और उसके भीतर के सड़े हुए मस्तिष्क से निकलनेवाले कुत्सित विचारो पर ढक्कन रख दे । (**शृंगी को पास खींचने लगता है, वह गर्दन फेर लेता है ।**) अरी पगली लड़की, मुह क्यो फेर रही है ? मेरा मस्तिष्क मेरे हृदय मे है, यदि वह मस्तक होता तो उसकी दुर्गंध क्या मेरी स स के साथ बाहर नही निकलती ?

शृंगी अजी प्रजापतिजी, मैं तुम्हारी सती नही । मैं शृगी हू । यह देखो मेरी दाढी । मन्मथ कहता है कि कन्या को दाढी नही होती ।

दक्ष : अरे धूर्त, तू झूठ बोल रहा है । तू कन्या ही है । यह दाढी तुझे यो ही नही आ गई है । भरे दरबार मे मुझे अपमानित करने का साहस जिस समय तू हिमालय से चुराकर लाई, उस समय तुझे यह दाढी निकल आई । अरी ओ हिमालय पर रहने-वाली परिहास की देवी, तेरी यह दाढी पकडकर मैं यो उखाड दूगा । (**शृंगी जोर से चीख उठता है ।**) स्त्रिया आजकल कोमलता पसन्द नही करती । इसीलिए तुम्हे दाढिया आने लगी हैं । पर मैं प्रजापति हू । मैं जगत का नियन्ता हू । तुम्हारी दाढियो को उखाडकर यज्ञ मे उनकी आहुतिया देकर ससार के समस्त जीवो को मैं अमर कर दूगा ।

शृंगी · भृ गी, तुम अपनी दया अपने पास रखे रहो । मैं तो इसके अब प्राण ही लेकर छोड़ूगा । ओ म. . . .।

भृंगी देव क्या कहते हैं , यह तो तुम जानते हो न ? सकट मे यदि शत्रु भी है, तो उस पर दया करनी चाहिए ।

दक्ष — दया करनी चाहिए, हा, दया करनी चाहिए। परंतु वह शत्रु यदि मेरा दामाद होगा, तभी मै उसपर दया करूंगा । सारे जगत को अमर कर देने के बाद मै अपने दामाद का अपनी कन्या से विवाह कर दूगा और फिर उनकी सन्तान मृत्यु के यज्ञ की भस्म सारे जगतीतल पर बिखेर देगी । उस भस्म के प्रत्येक कण से असख्य जगत निर्मित होगे और उस भस्म की धधकती हुई ज्वाला के कारण जगत मे शान्ति का साम्राज्य छा जायगा और उस साम्राज्य का सम्राट होकर मैं सारे जगत को नष्ट-भ्रष्ट कर दूगा । **(भृगी को हृदय से लगाकर)** समझी, मेरी प्यारी कन्या ? यह सारी उठा-पटक तेरे कल्याण के लिए ही है ।

भृगी — ठीक है मेरे प्यारे पिता, पर अब हमारे महादेव के पास चल रहे हो न ?

दक्ष — अवश्य । तुम क्या सोचती हो ? क्या तुम सोचती हो कि मै शकर से डरता हू ? शकर से मै बिल्कुल नही डरता । अकड से गर्दन झुकाकर मैं शकर के सामने खडा रहूगा और किसीकी भी परवा न कर, उसके चरणो पर लोट जाऊगा । समझी बेटी, क्या तू समझती है कि मै पागल हो गया हू ? यह देख मेरा मस्तक **(भृगी के सिर को हाथ लगाकर)** मैने अपनी काख मे दबा लिया है । दो अगुलियो की कैंची मे पकडकर मै इसका कचूमर निकाल दूगा, समझी ? क्या मै शंकर से डरता हू । बता कहा है वह तेरा शकर ? उसके सामने आते ही यदि मै उसके चरण न पकड लू, तो मेरा नाम दक्षप्रजापति नही । **(भाग जाता है । भृगी भृगी भी चल देते हैं ।)**

दृश्य दो

(दौडती हुई पार्वती प्रवेश करती है ।)

पार्वती — ठहरो देव, ठहरो । क्या इसलिए रूठ कर जा रहे हो कि मैने आपकी अवज्ञा की ? क्या आपका वह क्रोध अभी तक शान्त

नही हुआ ? देव, उस समय मै मानवी थी, अब मै मानवी नही। उस समय मै दाक्षायणी थी—मनोविकारो के वशीभूत हो जाने-वाली मनुष्य-कन्या थी। अब मै पार्वती हू—पर्वत की कन्या हू। पत्थर से उत्पन्न होने के कारण क्या मेरा हृदय भी अब पत्थर जैसा ही नही हो गया होगा ? डरिये नही, देव ! अब मेरा मन नही डगमगायगा। मै पर्वत की तरह अचल हो गई हू। पिता के थोथे अभिमान का मेरे मन पर अब कोई प्रभाव नही पडेगा। यह क्या ? आप हँसते क्यो है ? क्या आपको मुझपर इसलिए विश्वास नही होता कि मुझे पर्वत पर, अपने पिता पर अभिमान है ? आपको विश्वास दिलाने के लिए अब मै और कौन-सी अग्नि परीक्षा दू ? जिस तरह आग मे तप कर निकला हुआ सुवर्ण निर्मल सिद्ध होता है, उसी तरह यज्ञ-कुण्ड मे अपने-आपको जला देने के बाद भी क्या मै आपकी कसौटी पर खरी नही उतरी ? क्या आप इसलिए चौक पडे कि मेरा रूप वही है ? परतु देव, प्रथम-मिलन के समय यही रूप आपको अधिक सुन्दर लगा था। देव, उस समय जब आप मेरे सौन्दर्य का आवश्यकता से अधिक वर्णन करने लगते, तब लज्जा से मैं लाल हो उठती। उस समय मानसरोवर के लाल कमल की उपमा देकर मेरे मुख को आप मुख-कमल कहा करते। उस प्रशसा मे घबडाकर मुझे पसीना आ जाता। तब उसे लक्ष्य करके आप ही नही कहते थे कि कमलपत्र पर ओस की बूदे इसी प्रकार चमकती है ? फिर उस रूप के प्रति मुझे अभिमान क्यो नही होना चाहिए ? लज्जा मे मुरझाकर जब आपके वक्ष पर मैने मुह छिपाया, तब आपके गले के सर्प ने फन उठाकर, फूत्कार किया था। उस समय क्या आप ही ने यह नही कहा था कि कमलिनी के पत्ते पर नाग इसी तरह झूम उठता है। मैं भला नाग से क्यो डरती ? समुद्र-मथन के समय शेषनाग की सहस्र जिह्वाओ से निकला हुआ कालकूट जिस कठ मे रुका हुआ, उस कठ को मैंने बाहो

मे भर लिया था। फिर विषैले फूत्कारो मे मै भला क्यो डरती ? कालकूट से नीले पडे हुए आप के कठ का मैने अनेक बार चुम्बन लिया था। मैं यदि विष से डर जाती, तो दक्ष के भयकर क्रोध का सामना कैसे कर सकती थी ? देव, मैंने आपका अपमान किया। परतु यह देखते ही कि पिताजी आपका अपमान कर रहे है, मै स्वस्थ नही बैठी रही। क्या वह हाल आपसे किसीने कहा ही नही ? या मब कुछ जानते हुए भी आप मुझपर अभीतक रूठे है ? यह सच है कि आप क्रोधी है, पर मैंने आपको सदा अनुरागी ही पाया। इस अनुराग के कारण ही तो अपने चरणो की इस दासी को आपने हृदय से लगाया था। अब आपका वह अनुराग कहा गया ? आप दक्ष पर क्रोधित हुए तो क्या उस क्रोध के साथ अपने अनुराग पर भी आपको क्रोध आ गया ? शकर, आपको जग के कल्याण की चिंता है। फिर केवल मैं अकेली ही आपको जग से भिन्न क्यो लगती हू ? महादेव, दक्ष से मैंने अपना सपूर्ण नाता तोड दिया और अब जगत से अत्यन्त निकट का नाता जोडा है। सिर्फ इसीलिए तो मैं अब पर्वत की कन्या हुई हू। यह कहकर मुझे धिक्कारने का अब कोई अवसर ही नही रहा कि मैं किसी ऐश्वर्यशाली की कन्या हू। चूकि हिमालय आपके चरणो के तले रहता है, इसीलिए मैं हिमालय की कन्या हुई। क्या अब भी आप मुझे अस्वीकार कर देंगे ? पैरो तले की धूल में पैदा हुई चम्पा की कली को क्या आप पैरो तले कुचल देंगे ? देव, आपके शरीर से स्पर्श करनेवाली हवा मेरे शरीर से लगकर मुझे आपके आलिगन का सुख देती है। इसीलिए मैं अब इस हिमालय की एक भिलनी वन गई हू। जब मुझे पता चला कि मेरे भोले-भाले शभू को भोले-भाले लोग अच्छे लगते हैं, तब मैं भिलनी बन गई। हाथ मे चमकता हुआ त्रिशूल लेकर, सफेद वर्फ पर सचार करनेवाले गौराग भील को यह भिलनी— यह गौरी क्या अनुरूप नही होगी ? मैंने दो-तीन बार आपके

सामने आने का प्रयत्न किया। पर आपको सदा आखे बन्द किये ही पाया । आपकी आखे खोलने के लिए अब आखिर अजन भी कोन-सा लगाऊ ? प्रेम का गुलाबी अजन मै आपकी आखो मे लगा भी देती, पर देव, मैं आपसे डरती हू । पहले वचन दीजिये कि पिछली बातें फिर नही निकालोगे, तभी मैं आपके पास आऊगी । मैं शिकार खेलनेवाली भिलनी हू । यह याद रखिए देव! भागते हुए हरिण पर बाण छोडकर उसे घायल कर देना मैंने सीखा है। आप जरा सभलना । यदि मेरा नयनबाण आपको कही लग गया, तो आपके पचप्राण मेरे हाथ मे आ जायगे—परतु आप शिकार के लिए बिल्कुल अपात्र हैं। आखे बदकर सोये हुए जानवर का शिकार करना क्या अधर्म नही होगा ? प्यारे, यह आख-मिचौनी अब छोडिये। क्या 'आनद आनद' कहू अब । पर नही मेरे मुह से आप जब 'आनद' शब्द सुनते हैं, तो आपकी खुली आखे भी बद हो जाती है। फिर अब आखिर करू क्या ? क्या दोडकर आपके गले मे एकदम बाहे डाल दू । सर्प का आलिगन आपको अच्छा लगता है न! यह देखो देव, यह देखो सर्प । यह देखो उसका फन! अब तो हुआ न! क्या यह हाथ अब डाल दू गले मे ? या फूलो की माला पहना दू ? नही प्यारे, फूल अच्छे नही। उनका सुवास बडा उग्र होता है। इससे तो मैं आपके गोरे गाल पर लगी भस्म ही सूघती रहूगी । भिलनी को गध की अच्छी परीक्षा होती है। केवल गध से ही हम अपना शिकार खोज लेती हैं। (सूंघकर) मिल गया—मुझे अपना शिकार मिल गया—जब मैं आपको इस तरह भुजाओ मे कसकर भर लूगी और जबतक आप यह वचन न देगे कि फिर आप मुझसे कभी नही रूठेंगे, स्वय मै ही अपनी आखें बद किये रहूगी। (शिला **का आलिगन करती है। मन्मथ प्रवेश करता है।)**

मन्मथ यह क्या चमत्कार है ? यह पार्वती शिला को ही बाहो मे भरे बैठी है! मैंने अपने बाण इसपर गलत समय पर फेक दिए, यही

बडी भूल हो गई । इस गोल चिकनी शिला को ही यह शकर समझने लगी । अब क्या करू ? कहा है कि पहले बुद्धि जाती है और फिर जाते है, पचवाण, यही सच प्रतीत होता है ।

पार्वती (आखे न खोलकर) अब कबतक आप मौन रहेंगे ? जबतक आप मुझे पार्वती कहकर नही पुकारेंगे मै आखे नही खोलूगी ।

मन्मथ पार्वती यह क्या पागलपन है ? अरी, वह शिला है । जरा आखें खोलकर देख ।

पार्वती मै यो धोखा नही खाऊगी । समझे ! मै शिला की कन्या हू । मैं शिला का ही आलिगन करूगी । सचमुच आप बिल्कुल शिला जैसे ही है । इसीलिए तो मैने आपको वरमाला पहनाई । पर्वत की कन्या को—मुझे शिला को—इसी तरह का पत्थर-पति शोभा देता है ।

मन्मथ पार्वती, मै मन्मथ हू । मै तुम्हे पुकार रहा हू ।

पार्वती चला जा यहा से । पति-पत्नी के एकान्त मे मन्मथ क्यो आडे आता है । भाग यहा से ।

मन्मथ मै तुम्हे शकर के पास ले जाने के लिए आया हू ।

पार्वती (**चौंककर आखें खोल देती है ।**) ओ मा । सचमुच यह तो शिला है । देवी शिला, धन्य हो तुम । भ्रम मे ही क्यो न हो, मैं तुम्हें ही महादेव समझ गई । भ्रम मे ही क्यो न हो, तुमने मुझे महादेव के आलिगन के सुख-जैसा ही सुख दिया । अपना यह भ्रम अब मैं ससार पर फेक दूगी और पूरी तरह साव-धान हो जाऊगी । देवी शिला, ससार पर फेके हुए इस भ्रम के कारण अब सारा ससार तुम्हे ही महादेव समझकर तुम्हारी पूजा करेगा । तुम अपने इस सम्मान का कुछ भाग मुझे भी दोगी न ?

मन्मथ : अब यह भ्रम छोडो और चलो, मूर्त्तिमान सत्य की ओर चले ।

पार्वती मन्मन्थ सत्य की मूर्ति के चितन से उत्पन्न हुए भ्रम को दूर कर अब मूर्त्तिमान सत्य की ओर जाने के लिए कह रहे हो तुम ? यह भ्रम ही मुझे बड़ा मीठा लगा । यदि भ्रम इतना मीठा है तो

प्रश्नावली

१—रगमयी, सुरभि का पद परिचय करो ।

२—गरिमा के क्या शब्दार्थ हैं ?

गत हुई अब थी द्वि घटी निशा, तिमिर पूरित थी सब मेदिनी ।
अति अनूपमता संगथी लसी, गगन के तल तारक मालिका ॥

× × × ×

अमित विक्रम कंस नरेश ने, धनुष यज्ञ विलोकन के लिये ।
कल समादर से व्रज भूप को, कुंवर संग निमन्त्रित है किया ॥

वह निमंत्रण लेकर आज ही, सुत-स्वफलक समागत है हुये ।
मधुपुरी कल के दिन प्रात ही, गमन भी अवधारित हो चुका ॥
कमल-लोचन-कृष्ण वियोग की, अशनि-पात समां यह सूचना ।
परम आकुल गोकुल के लिये, अति अनिष्ट करी घटना हुई ॥
कुछ घड़ी पहिले जिस भूमि में, प्रवहमान प्रमोद प्रवाह था ।
अब उसी रस प्लावित भूमि में, वह चला वर श्रोत विषाद का ॥

ब्रह्मचर्य का चमत्कार (भीष्म-प्रतिज्ञा)

(१)

पारथ के सारथी से कहना, प्रण भीष्म पिता ने ठाना है ।
कृष्णचन्द्र से शस्त्र समर में, एक बार उठवाना है ॥
शेष महेष सुरेश लखें, प्रण पालन कर दिखलाऊँ मैं ।
तीर समीर को चीर चलें, वाणों के वादल छाऊँ मैं ॥
जलको थल कर दूँगा रणमें, थल को जल कर दिखलाऊँ मैं ।
आकाश पताल को काटि प्रलय, का पूरण साज सजाऊँ मै ॥
गिरिधारी के कर कमलो में, कल निश्चय शस्त्र गहाना है ।
अर्जुन के सारथी से कहना, प्रण भीष्मपिता ने ठाना है ॥

(२)

गंगा की मुझ को सत्य शपथ, मैं शांतनुसुत कहलाता हूँ।
तारा मंडल साक्षी मेरा, प्रण के हित हाथ उठाता हूँ॥
कल इन्द्र कुबेर वरुण यम भी, आये तो क्या घबड़ाता हूँ।
मैं क्षत्री वंश के अंश में हूँ, और जन्म जती कहलाता हूँ॥
वीरता विजय ब्रह्मचर्य से है, जग जीवन में बतलाना है।
पारथ के सारथी से कहना, प्रण भीष्मपिता ने ठाना है॥

(३)

गोपाल से कहना अर्जुन से, तुमने मित्रता निभाई है।
शरणागत जान सहाय करी, प्रभो आपकी यह प्रभुताई है॥
रण-कौशल कल दिखलाऊँगा, बस जिय में यही समाई है।
भीषम को नाथ यह ना समझौ, तीसरी अवस्था आई है॥
मैं देखूंगा रण भूमी में, अर्जुन कैसा मर्दाना है।
पारथ के सारथी से कहना, प्रण भीष्मपिता ने ठाना है॥

(४)

पारथ के सारथी से लड़ना, कल मन में यही विचारी है।
नहिं शूर समर से डरते है, मृत्यू भी प्राण से प्यारी है॥
वह जोड़ा नर नारायण का, अपना तो लक्ष्य मुरारी है।
ऐसा तो समय फिर अन्य जन्म में, मिलना भी अतिभारी है॥
"रामचन्द्र" आदर्शजनो का, भारत वर्ष घराना है।
अर्जुन के सारथी से कहना, प्रण भीष्म पिता ने ठाना है॥

श्रीकृष्ण का नाग नाथन।

वंशस्थ छन्द।

प्रवाहिता जो कमनीय धार है, कालिन्दजा की भवदीय सामने।
विदूषिता सो पहिले अतीवथी, विनाशकारी विष काली नाग से॥

मृत्य कितना मीठा होगा ?

मन्मथ यह कौन कह सकता है ? भ्रम मे जो मिठास होती है, वह सत्य मे नही आ सकती। पर मत्य सत्य ही है और भ्रम भ्रम ही। इसलिए मिठाम का प्रश्न इम विषय मे छोड देना ही अच्छा।

पार्वती मिठास का प्रश्न यदि छोड दे, तो हृदय की तृप्ति कभी नही होगी। यह रसना का प्रश्न नही। रसना की तृप्ति हृदय तक नही पहुचती। परतु हृदय की तृप्ति नखशिखान्त मर्वाग को सतुष्ट कर देती है।

मन्मथ ठीक है। तो हृदय की तृप्ति के लिए चलो, हम शकर के पाम ही चले।

पार्वती नही मन्मथ, मुझे भय लगता है। देव के कोप से मै खूब परिचित हू। मैने उनकी जो अवज्ञा की है, उमका उन्हे स्मरण हो जायगा और उसके लिए जब वह मुझे धिक्कारेगे, तो मुझे मरणातक दु ख होगा। एक बार का मरण व्यर्थ होकर, नया जीवन भी मरणप्राय हो जायगा।

मन्मथ अब जीना है या मरना, इमका अतिम फैसरा कर ही लेना चाहिए। पार्वती, मेरे पुष्प-बाणो पर पुन एक बार विश्वाम रखो और मेरे साथ शकर का दर्शन कग्ने चलो। **(मायावती आती है)**

माया पार्वती, मन्मथ का पीछा तू अब छोड दे। तेरे नये अवतार के साथ ही मै भी हिमालय पर रहने आ गई हू। तो क्या मै अपनी आखो के सामने तेरा अकल्याण हुआ देखू ? मन्मथ की बिचुआई से तेरा कल्याण कभी नही होगा।

मन्मथ इस मन्मथ की बिचुआई से ही एक बार शिव-सती सयोग जो हुआ था!

माया और इसी मन्मथ की बिचुआई से अत मे उनका बडे विलक्षण ढग से वियोग भी हुआ।

पार्वती बोलो मन्मथ! अब मौन क्यो हो ? तुम स्वीकार करते हो न कि तुम्हारी बिचुआई से ही इतने अनर्थ हुए ?

मन्मथ मैने जो भी किया मदिच्छा से प्रेरित होकर ही किया। उनके परिणाम यदि विपरीत हुए, तो इसमे मेरा क्या अपराध ? तुम

यह अपराध मेरे मत्थे मढ रही हो, सो स्वाभाविक ही है। अपनी भूलो का परिणाम दूसरे के—यहा तक कि उपकार-कर्ता के भी मत्थे मढ देना मानव का स्वाभाविक धर्म है। मैं केवल इतना ही चाहता हू कि पार्वती की शकर से भेट हो जाय। यह स्पष्ट दीखते हुए भी कि इसमे मेरा अपना कोई स्वार्थ नही, मेरे विषय में कोई कुशकाए करे, तो यह मेरा दुर्भाग्य है।

माया : अच्छा देखो, इस काम मे मैं जैसा कहू, वैसा तुम करोगे ?

मन्मथ दूसरे की कार्य-पद्धति से काम करने का मुझे अभ्यास नही। अपनी पद्धति से कार्य करने मे यदि मेरी हानि भी हो जाय, तो मुझे उनकी परवा नही। दक्षप्रजापति के सहवास मे रहने के कारण यह सिद्धान्त मेरे रक्त के कण-कण मे बिध गया है।

पार्वती पर इस सिद्धात के परिणाम क्या हुए ? अत मे उसे अपने सर्वस्व से भी वचित हो जाना पडा।

मन्मथ . मेरा भी सर्वस्व चला जाय, तो मुझे इसकी कोई चिन्ता नही। फिर मेरा सर्वस्व है ही क्या ? ये पाच बाण ही मेरे सब-कुछ है। वे किसी भी समय तुम्हारी सेवा मे हाजिर हैं। इतना ही क्यो, यदि इस काम मे मुझे अपने प्राणो से भी हाथ धोना पडे, तो इसकी भी मुझे परवा नही। (स्वगत) इतने पर ही सतोष हो जाय तो काफी है।

पार्वती · मेरे लिए यदि तुम्हे कष्ट होते हो, तो यह मुझे कभी अच्छा न लगेगा। मैं स्वय स्फूर्ति से जगत मे उदय प्राप्त करने के लिए बाहर निकल पडी हू। ऐसे समय मेरे लिए यदि दूसरे के प्राण जाय, तो यह मुझे कैसे अच्छा लगेगा ? जो होना हो सो हो जाय। परन्तु मन्मथ, मैं ऐसा कोई काम नही करूगी, जिसके कारण मेरे लिए तुम्हारे प्राण सकट मे आ जाए।

मन्मथ मेरे प्राण कैसे सकट मे आयेगे ? पार्वती, मेरे इन बाणो को देखो—इन्हीपर मेरा सारा दारोमदार है। पहले एक बार तुम इनका प्रभाव देख चुकी हो। फिर ये व्यर्थ कैसे जायगे ? उस समय महादेव ने ही बाण मारने की आज्ञा दी थी। उस पुरानी

आज्ञा से लाभ उठाकर, मैं तुम्हे अपने पीछे रखकर, उनपर ये वाण छोडूगा । ज्योही ये वाण उनके हृदय को आन्दोलित करें कि तुम तुरत आगे बढकर उनके गले मे वरमाला पहना देना । फिर उनके कोप से भय खाने का कोई कारण ही न रहेगा ।

माया किसी भी उपाय से शिव-पार्वती-सयोग हो जाय, यह मैं भी चाहती हू । पर मन्मथ, महादेव के कोप की तुम्हें कल्पना है न !

मन्मथ महादेव का कोप ! ह । कहा का महादेव का कोप ? उनके कोप से डरने के लिए मैं कोई दक्ष नही । और मुझपर आखिर वह कोप ही क्यो करेंगे ? चलो, पार्वती । तुम इनकी एक न सुनो । अगर तुम शकर को चाहती हो, तो यह पक्का ध्यान मे रख लो कि इन प च वाणो की सहायता के बिना वह तुम्हें कदापि न मिलेंगे ।

माया मन्मथ, उस नर-केसरी की गुफा मे घुसने से पहले खूब सोच लेना ।

मन्मथ मुझे सोचने-वोचने की आदत ही नही ।

रति चलो–चलो, शकर अभी-अभी ही समाधि-मग्न हुए हैं । इसी क्षण यदि हम न हुए, तो आगे अपना कार्य न होगा । चलो जल्दी । (रति जाती है ।)

पार्वती अच्छा बावा, चलो । जैसी तुम लोगो की इच्छा । (पार्वती, रति और मन्मथ का प्रस्थान ।)

माया जाओ मन्मथ । तुम्हारी मृत्यु निकट आ गई है, इसमे सदेह नही । इस मूर्ख को यह नही मालूम कि शकर पर शस्त्र उठानेवाला जीवित नही रह सकता । कुछ भी क्यो न हो । शायद होनहार यही हो कि मन्मथ की मृत्यु से ही शिव-पार्वती-विवाह होगा । सच भी तो है । मन्मथ के नाश के बाद यदि शिव-पार्वती-विवाह हुआ, तभी निष्काम प्रेम की सच्ची महिमा ससार को मालूम होगी । (जाती है ।)

दृश्य तीन

(आसनस्थ शकर)

शंकर (स्वगत) सती के विरह से व्याकुल हुए मन को यदि जगत-कार्य में उलझाने का प्रयत्न करता हू, तो उसी की प्रेममयी मूर्त्ति आखो

के सामने मूर्त हो उठती है और मेरा उद्धार का आवेश उसी क्षण न जाने कहा विलुप्त हो जाता है। इस अज्ञात ससार मे भटकनेवाली मेरी निर्जीव जीव-ज्योति उसीके स्नेह से प्रकाशित हुई थी। उसी प्रकाश मे मैने जग को देखना सीखा। उस जग मे मुझे सर्वत्र सौन्दर्य दीखने लगा और यह ज्ञान होते ही, कि उस सौन्दर्य का आधार सती ही है और उसीकी दृष्टि से मुझे जग सुन्दर दीख रहा है, उसीको जगत का केन्द्र मानकर, मै उसकी आराधना करने लगा। पर उसके जाते ही मै अब पहले जैसा ही भिखारी हो गया। उसके प्रेम के अभाव के कारण मुझे जगत का सारा ऐश्वर्य तुच्छ लगने लगा। पर यह सब किस कारण हुआ। सती! सती! मुझ पागल को यदि अनाथ ही करके रखना था, तो पहले अपने प्रेम के बधन मे तुमने मुझे बाधा ही क्यो? ऐश्वर्य से एक-दम दरिद्रता मे आने पर तुम्हे दरिद्रता दु सह नही हुई। परतु तुम्हारे प्रेम का ऐश्वर्य नष्ट होते ही मै अवश्य अधिक दुखी भिखारी हो गया। क्या करू। वियोग की यह ज्वाला कैसे सहन करू? रे मन्मथ, यदि तू यह आग न लगाता, तो दरिद्रता के सार्वभौम जगत के सारे ऐश्वर्यशालियो से भी मैं अधिक सुखी रहता। रे चाडाल, हमारा यह सुख क्या तुझसे देखा नही गया? तू रति के साथ आनद मे रह रहा है और मै शक्तिहीन होकर विधुरावस्था मे दिन काट रहा हू। विधुर की मानसिक यातनाओ को तू यदि समझता तो सती को कभी मायके न ले जाता—मेरे आनद मे कभी इस प्रकार विष न घोलता। अरे! अगर वह मन्मथ इस समय मेरे सामने आ जाय, तो इसी क्षण मे उसे भस्म कर दूगा। यह विधुरा-वस्था अब कैसे काटू? यदि जगत के कल्याण का चिंतन करके हृदय की मूर्त्ति को भुला देने का प्रयत्न करता हू तो सारा जगत ही सती-रूप दीखने लगता है। क्या सती के प्रेम मे ही ससार की उत्पत्ति हुई है? नही, अब यह विचार ही नही करूगा। इस विचार से विकार ही प्रबल होने लगता है। हे विश्वव्यापक नारायण, मेरी हृदयेश्वरी से क्या पुन मेरी भेट करा दोगे? जग

की ओर देखने लगता हू, तो सती की स्मृति ही अधिक प्रबल हो जाती है। इससे अच्छा तो यह होगा कि आखे बन्द कर लू और अपनी हृदयेश्वरी को खोजने के लिए दृष्टि को हृदय की ओर मोड लू। तभी आनद प्राप्त होगा। **(आखें बन्द कर लेता है। मन्मथ रति और पार्वती प्रवेश करते हैं।)**

मन्मथ पार्वती, अब मेरे पीछे खडी हो जाओ। मै बाण छोडने के लिए मौका देख रहा हू। तुम ध्यान से देखती रहो और ज्योही मै बाण छोडू, त्योही तुम झट-से आगे बढकर शकर के गले मे अपनी यह माला पहना देना। **(शृगी, भृगी और दक्ष प्रवेश करते हैं। मन्मथ, रति और पार्वती एक पेड की ओट में छिप जाते हैं।)**

शृगी हा, दक्ष! आगे बढो और महादेव को प्रणाम करो। क्या तुम उनसे डरते हो?

दक्ष मैं डरपोक नही। यह मेरा मुकुट देखो। मुकुटधारी मनुष्य कभी किसीसे नही डरते—शत्रु के चरण छूने मे भी नही डरते—समझे! मुझे डर लगता है—ऐसा नही कि न लगता हो। मुझे अपने आश्रितो का ही डर लगता है। क्या तुम हो मेरे आश्रित?

शृगी नहीं, मैं महादेव का गण हू।

दक्ष तो फिर मै तुमसे बिलकुल ही नही डरता। मै अपनी कन्या से डरता हू। क्या तुम हो मेरी कन्या?

शृगी आग लगे उस कन्या को। कन्या के कारण ही इतना अनर्थ हुआ। यदि कन्या शब्द ही मिट जाय तो क्या बात है?

दक्ष तुम कन्या नही हो न! फिर तुम्हे यह सीग कहा से निकल पडा? क्या मन्मथ ने तुम्हे यह सीग लगा दिया? मनुष्यो को पशु बना देने मे वह बडा सिद्धहस्त है। कहा है वह मन्मथ? उससे कह दो कि मुझे भी दो सीग लगा दे और इस शृगी जैसी दाढी भी, जिससे ससार कल से मुझे बकरा कहने लगेगा। फिर मै चाहे जिस पेड की पत्तिया खाने के लिए स्वतत्र हो जाऊगा—मुझे किसीका भय न रहेगा। वह देखो, उस पेड की आड मे देखो—वह मन्मथ आया आया—मुझे सीग और दाढी लगाने के लिए वह मन्मथ आया।

दौडो शंकर, महादेव दौडो, और इस मन्मथ से मेरी रक्षा करो—(शंकर के पीछे जाकर छिप जाता है)।

शंकर . कौन ? मन्मथ ? चाडाल जलकर भस्म हो जा। (मन्मथ जल जाता है।) और यह कौन ? यह भ्रम तो नही ? या कि मैं अभी तक हृदय के भीतर ही देख रहा हूं।

पार्वती · (आगे बढ़कर माला पहना देती है।) हृदयेश्वर, मैं आपकी पहले की सती अब पार्वती होकर आई हू।

शंकर सात पग आगे चलकर इस शिला पर चढके तुमने मुझे माला पहनाई। पार्वती, सप्त स्वर्गो की सीढिया पार करके आज तुम निश्चित ही इस निश्चल आसन पर विराजमान हो गई। मन्मथ का यह 'लज्जाहोम'[1] हमारा मगल करे।

रति : देव, यह आपने क्या किया ? विधुरावस्था का अनुभव होते हुए भी अत में आपने मुझे विधवा बना दिया।

शंकर : उसने अपने कर्म का फल पाया।

रति · पर मैं अब क्या करू ? पार्वती की सखी को वैधव्य शोभा नहीं देता।

शंकर . तुम्हारा पति देहरहित अनग होकर नित्य तुम्हारे साथ रहेगा। आगे यादव कुल मे उसके देहधारी होने तक तुम शकर के घर चिरकुमारी होकर रहो।

भृंगी : देव, यह देखिये दक्ष। इसीने आपको मन्मथ के आगमन की सूचना दी। आओ दक्ष, देव को प्रणाम करो। (दक्ष प्रणाम करता है।)

शंकर इस आनद के प्रसंग पर मैं तुम्हारी बुद्धि लौटा देता हू दक्ष! कम-से-कम अब तो अहकार छोडकर जगत पर राज्य करो।

दक्ष महारुद्र की कृपा से पावन हुआ यह दक्ष भविष्य में दरिद्र-नारायणो के एक सेवक के नाते ही प्रजा-पालन करेगा।

(प्रसूती और मायावती का प्रवेश)

माया . देखो प्रसूती, महादेव की कृपा से दक्ष शापमुक्त हो गया। और

---

1 विवाह में होने वाला एक हवन।

इधर देखो—यह है शिव-पार्वती-सयोग । मन्मथ को जलाकर रानी का पाणिग्रहण करने की सामर्थ्य रखनेवाले इस अद्वितीय पुरुष-सिह को—इस नरकेसरी को देखो !

प्रसूती शिव-पार्वती की जय हो ।

शंकर मायावती, इस स्थान मे तुम्हारी कृपा से मुझे पार्वती प्राप्त हुई । हम इस स्थान को तुम्हारा ही नाम दे रहे हैं और हमारा आशीर्वाद है कि कलियुग मे इस पुण्य-भूमि पर सन्यासियो के लिए अद्वैताश्रम की स्थापना होगी ।

भृंगी देव, आपने सबको तो वरदान दिये । पर मैं कोरा ही रह गया ।

शंकर बोल, मेरे भोले लडके, तेरी क्या इच्छा है ?

भृगी मेरी बडी इच्छा है कि मेरे सिर पर मुकुट रहे, पर यह सीग रुकावट पैदा कर देता है । इस सीग को हटा दीजिए और यह आशीर्वाद दीजिए कि भविष्य मे किसी भी मुकुटधारी पुरुष के सीग दिखाई न दें ।

शंकर तथास्तु !

माया देवी पार्वती, मन्मथ को जलाकर तुम्हारा पाणि ग्रहण-करनेवाले नरकेसरी की पत्नी होने के कारण तुम्ही सच्ची आदिमाता हो । देवी, शक्तिसपन्न बालको की माता होने के लिए पहले विघ्नहर्ता गणेश को जन्म दो । गणेशजननी बनो । यही मेरा तुम्हे आशीर्वाद है । तथास्तु !

(यवनिका गिरती है ।)

●